अक्तूबर - दिसंबर 2000 वर्ष : 32 ❊ अंक : 4

# वैज्ञानिक

हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद की पत्रिका
भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र के सौजन्य से प्रकाशित

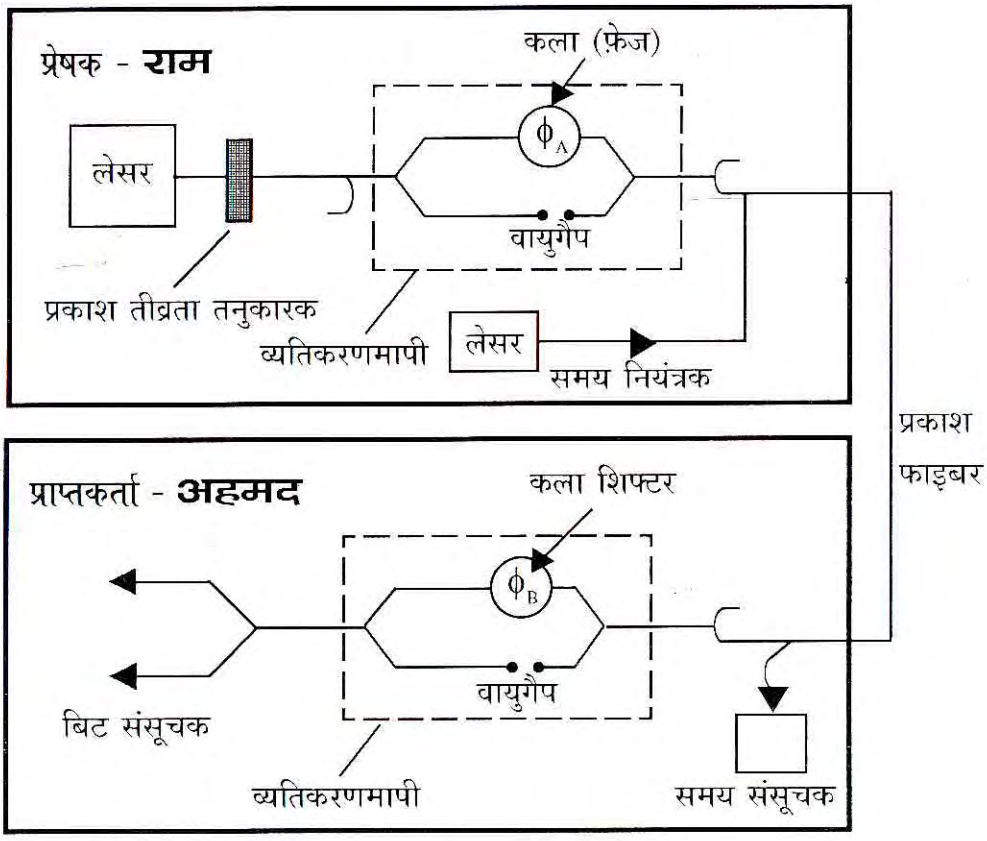


## क्वांटम चाबी वितरण : एक परिकल्पना

# हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद

परिषद हिंदी में वैज्ञानिक साहित्य के सृजन व प्रचार हेतु नियमित रूप से त्रैमासिक पत्रिका "वैज्ञानिक" का प्रकाशन, विज्ञान गोष्ठियों, वार्ताओं एवं अखिल भारतीय विज्ञान लेख प्रतियोगिता का आयोजन करती है।

**परिषद की सदस्यता एवं "वैज्ञानिक" पत्रिका का शुल्क इस प्रकार है :**

| परिषद सदस्यता (रु. में) | | | | वैज्ञानिक शुल्क (रु. में) | |
|---|---|---|---|---|---|
| | एक वर्ष | आजीवन | संरक्षक | | एक वर्ष |
| व्यक्तिगत | 50 | 400 | 5000 | व्यक्तिगत | 50 |
| संस्थागत | 100 | 1000 | | संस्थागत | 100 |

- "वैज्ञानिक" पत्रिका की कोई आजीवन सदस्यता / शुल्क नहीं है।
- वर्तमान नियमानुसार परिषद के सदस्यों को "वैज्ञानिक" निःशुल्क भेजी जाती है।
- सभी शुल्क **हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद** के नाम से केवल **डिमांड ड्राफ्ट (मुंबई)** द्वारा ही भेजें। **मुंबई** से बाहर के चैक, मनीआर्डर एवं पोस्टल आर्डर द्वारा भेजा शुल्क स्वीकार नहीं होगा।
- कृपया शुल्क के साथ अपना निजी विवरण इस पत्रिका में दिये गये आवेदन पत्र के प्रारूप के अनुसार भेजें।
- संरक्षक सदस्य, यदि चाहें तो, उनका एक विज्ञापन प्रतिवर्ष "वैज्ञानिक" में निःशुल्क छापा जा सकता है।

## -: *"वैज्ञानिक"* में विज्ञापन :-

हिंदी में प्रकाशित होने वाली विज्ञान पत्रिकाओं में "वैज्ञानिक" अग्रणी है। देश के सभी मुख्य वैज्ञानिक संस्थान इसके ग्राहक हैं। इस पत्रिका में आपके विज्ञापन आमंत्रित हैं। पूरे पृष्ठ की छपाई का आकार 16 सेमी x 21 सेमी है।

**विज्ञापन की दरें (प्रति अंक)**

| | | | |
|---|---|---|---|
| अंतिम आवरण | : रु. 2,500/- | पूरा पृष्ठ | : रु. 1,500/- |
| दूसरा/तीसरा आवरण (अंदर) | : रु. 2,000/- | आधा पृष्ठ | : रु. 800/- |

## लेखकों से निवेदन

"वैज्ञानिक" हेतु लेख भेजते समय कृपया निम्न बातें ध्यान में रखें :

- लेख का विषय नया हो जो पाठकों में अधिक ज्ञान प्राप्त करने की जिज्ञासा बढ़ाये,
- लेख मौलिक और पठनीय हो, भाषा सरल और बोधगम्य,
- कृपया अनुवादित लेख न भेजें,
- लेख टंकित किया हुआ अथवा स्पष्ट हस्तलिपि में दोनों ओर पर्याप्त हाशिया छोड़ कर कागज के एक ओर ही लिखें,
- विषय वस्तु समझाने के लिए यदि चित्र आवश्यक हों तो उन्हें अलग से सफेद कागज पर काली रोशनाई से खींच कर लेख के अंत में संलग्न कर दें,
- अस्वीकृत रचनाएं डाक-टिकट लगा लिफाफा संलग्न होने पर ही वापस की जायेंगी।

**- संपादक**

अ नु क्र म णि का


# वैज्ञानिक

वर्ष 32 अंक 4

अक्तूबर-दिसंबर 2000



**: व्यवस्थापन मंडल :**

श्री गोरा चक्रवर्ती
(संयोजक)

डॉ. अशोक कुमार सूरी
श्री रमेश चंद्र पंत
श्री नंद लाल सोनी
श्री कुलवंत सिंह
श्री राजेश कुमार

**: संपादन मंडल :**

डॉ. गोविंद प्रसाद कोठियाल
(संयोजक)

श्री हरिओम मित्तल
डॉ. राज नारायण पांडेय
डॉ. भूपेंद्र सिह तोमर
डॉ. कैलाश चंद्र भल्ला



**वार्षिक शुल्क**

| संस्थागत | व्यक्तिगत |
|---|---|
| 100 रु. | 50 रु. |

**कार्यालय**

"वैज्ञानिक", हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद,
सूचना प्रभाग, सेन्ट्रल कांप्लेक्स
भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र
मुंबई - 400 085



संपादकीय 3

**लेख**

1. मादक पदार्थ - उपयोग एवं दुरुपयोग 5
   - डॉ. अवधेश शर्मा
2. कचरे से कंचन की असीम संभावनाएं 10
   - डॉ. दिनेश मणि
3. आयुर्वेद के बदलते आयाम 22
   - रिपुदमन कुमार, डॉ. संजीविना भंडारी, संदीप पठानिया एवं डॉ. बृजलाल

**टिप्पणियां**

1. प्रदूषण रोकने में कारगर गैस प्लाज्मा 25
   - डॉ. विजयेंद्र नारायण
2. नीम : आधुनिक कीटनाशकों का सर्वोत्तम विकल्प 26
   - विजय चितौरी
3. औषधीय महत्व की अमूल्य वनस्पतियां 28
   - डॉ. एन. के. बोहरा
4. दालचीनी - एक उपयोगी घरेलू औषधि 31
   - डॉ. एन. के. बोहरा
5. उत्तरांचल के कलात्मक फर्न 32
   - मोहन चंद्र कबड्वाल

**विज्ञान नाटक**

'पुष्पक रथ पर भानु और पार्वती' 18
- गोरा चक्रबर्ती

**विज्ञान-कथा**

कौन मयूर है सबसे हल्का ? 23
- गोविंद प्रसाद शर्मा

● "वैज्ञानिक" में लेखकों द्वारा व्यक्त विचारों से संपादन मंडल का सहमत होना आवश्यक नहीं है ।

● "वैज्ञानिक" में प्रकाशित समस्त सामग्री के सर्वाधिकार हिं. वि. सा. परिषद के पास सुरक्षित हैं ।

● "वैज्ञानिक" एवं हिं. वि. सा. परिषद से संबंधित सभी विवादों का निर्णय मुंबई के न्यायालय में ही होगा ।

*'वैज्ञानिक' में प्रकाशित सामग्री का आप बिना अनुमति लिये उपयोग कर सकते हैं । परंतु इस बात का उल्लेख करना अनिवार्य होगा कि अमुक सामग्री 'वैज्ञानिक' से साभार ली गयी है ।*


**विज्ञान कविता**

**1. परमाणु** 24
- अनंत भट

**2. परमाणु बिजली घर** 33
- दिलीप भाटिया

**3. भारत का विज्ञान** 47
- ऊषा द्विवेदी 'राज'

**विज्ञान समाचार**

● भा. प. अ. केंद्र से 34

● अन्य विज्ञान समाचार 36

**हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद** 41

**भा. प. अ. केंद्र की 32 वीं वार्षिक रिपोर्ट (1999-2000)**

**कुछ फूल : कुछ कांटे** 44

**पूर्व प्रकाशित अंकों की अनुक्रमणिका** 48


## आजीवन सदस्यता / "वैज्ञानिक" ग्राहकों के लिए आवेदन पत्र का प्रारूप

**श्री नंद लाल सोनी**
कोषाध्यक्ष, हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद, ईंधन पुनर्भरण तकनीकी प्रभाग (RTD),
भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र, मुंबई 400 085.

**प्रिय महोदय**

मैं, हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद (भापअ केंद्र, मुंबई) का आजीवन सदस्य / "वैज्ञानिक" पत्रिका का ग्राहक बनने का इच्छुक हूं । मेरा निजी विवरण एवं शुल्क* संबंधित विवरण निम्नलिखित है :

नाम (हिंदी में) : _____ (अंग्रेजी में) : _____

पता (हिंदी में) : _____ (अंग्रेजी में) : _____

_____ _____

_____ _____

व्यवसाय :

हिंदी की पात्रता : _____ प्रवीणता _____

(Qualification) _____ (Specialisation) _____

डिमांड ड्राफ्ट सं. . . . . .दिनांक. . . . . बैंक . . . . . .रु. . . . . .

दिनांक : हस्ताक्षर :

*शुल्क 'हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद्' के नाम केवल डिमांड ड्राफ्ट (मुंबई) द्वारा ही कोषाध्यक्ष को भेजें ।

संपादकीय

# गोपनीय आंकड़ों की क्वांटम सुरक्षा

विशेष जानकारियों की गोपनीयता किसी भी राष्ट्र की सुरक्षा का एक अहम् पहलू है अत: इसे नजरअंदाज नहीं किया जा सकता है। यूं भी हर व्यक्ति के जीवन के कुछ पहलू गोपनीयता से जुड़े होते हैं जिन्हें वह अपनी बुद्धिमता से सुरक्षित रखने का प्रयास करता है। इसमें आश्चर्य नहीं कि यह मनोवृत्ति बेबीलोनियम सभ्यता के समय से प्रचलित है क्योंकि इसका मूलाधार जीवन की आवश्यकता से संबंधित है। प्रकृति में भी हर प्राणी अपनी सुरक्षा के लिए अभिनव तरीकों की खोज में सदैव तत्पर रहा है। विज्ञान की प्रगति इनमें नये-नये आयाम जोड़ती गयी है। "वैज्ञानिक" के जनवरी-मार्च 1997 के अंक में 'गोपनीय आंकड़ों एवं जानकारियों की सुरक्षा समस्या' पर संपादकीय के माध्यम से कुछ प्रकाश डाला गया था।

यह तो स्पष्ट हो गया है कि आज इलेक्ट्रॉनिकी एवं प्रकाश-इलेक्ट्रॉनिकी के माध्यम से जो संचार कार्य चल रहा है उसने एक ओर तो जनसाधारण के लिए जानकारियों के भंडार खोल दिये हैं वहीं दूसरी ओर उनके जीवन के गोपनीय पक्षों में भी हस्तक्षेप किया है। फलस्वरूप राष्ट्रीय महत्व के गोपनीय आंकड़ों एवं जानकारियों के ऊपर भी प्रश्न चिन्ह अंकित हो गये हैं। इसका एक कारण स्थानीय एवं अंतर्राष्ट्रीय कंप्यूटर नेटवर्कों (इंटरनेट) का आपसी जोड़ (लिंक) है। जैसे-जैसे विज्ञान ने आंकड़ों की सुरक्षा की दृष्टि से नयी प्रणालियां विकसित की हैं, जालसाजी के मानसिक रोग से ग्रसित लोग उनका तोड़ ढूंढ़ने में प्रयत्नशील हैं और सफल भी हो रहे हैं। वस्तुत: ये लोग एक तरह से वैज्ञानिकों को पुन: विचार करने और अभिनव क्षमताओं के विकास के लिए प्रेरित करते हैं। वैज्ञानिकों ने सदैव से चुनौतियों को जिम्मेदारी के साथ लिया है और निरंतर अधिक सुरक्षित प्रणाली प्रस्तुत की। इसी कड़ी में आज 21 वीं सदी के लिए क्वांटम सुरक्षा के द्वार भी खोल दिये हैं।

एक सुरक्षित संचार के लिए संदेशों को कोड द्वारा भेजा जाना आवश्यक है ताकि भेजनेवाले और प्राप्त करने वाले के अलावा दूसरा उसे न पढ़ सके। अब प्रश्न यही है कि संदेशवाहक चाहे वह गोपनीय / विश्वसनीय व्यक्ति हो अथवा प्रबल इलेक्ट्रॉनिक माध्यम, उसको जानने में असमर्थ रहता है अथवा नहीं, यहीं पर कोड की क्षमता और पद्धति का सही परीक्षण होता है। यह एक आम धारणा है कि चाबी जितनी बड़ी होगी, उतनी ही अधिक सुरक्षित रहेगी। वर्तमान में अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रचलित कोड डाटा एक्रिशन स्टैंडर्ड (DES) की चाबी की लंबाई 56 बिट (एक बिट यानी 1 या 0 का संयोजन) के बराबर लंबी है यानी इस कोड को तोड़ने के लिए $2^{56}$ हेरफेर करने पड़ेंगे। हालांकि काम अत्यंत जटिल एवं विकट है फिर भी अभेद्य नहीं समझा जा सकता है।

गोपनीय संदेशों को भेजने में सबसे बड़ी समस्या जो आती है वह है, 'चाबी वितरण समस्या'। समय के परीक्षणों के बाद प्रेषण एवं गंतव्य स्थानों के बीच एक लंबी चाबी के मुकाबले दो छोटी चाबियां अधिक सुरक्षित पायी गयी हैं। इनमें से एक चाबी 'सार्वजनिक चाबी' और दूसरी 'निजी चाबी' होती है। सार्वजनिक चाबी से कोई भी संदेश भेज सकता है परंतु इसे केवल वही व्यक्ति उसे पढ़ सकता है जिसके पास निजी चाबी हो। आज सबसे प्रमुख अधिकृत चाबी गुप्तप्रणाली (RSA) तीन वैज्ञानिकों रेवेस्ट (R), शमीर (S) तथा एडलमेन (A) के नाम पर

बनी है। इसका मूलाधार यह है कि अत्यंत बड़ी संख्या का गुणनखंड करना आसान नहीं होता है। हालांकि DES और RSA दोनों अभी तक पूर्णतः सिद्ध अभिधारणा पर आधारित नहीं हुए हैं। यही माना जा रहा है कि इस प्रकार की गुप्त चाबी तोड़ने के लिए कोई भी तीव्र कलन विधि (एल्गोरिद्म) मौजूद नहीं है। 1994 के आसपास क्वांटम यांत्रिकी से इस अभिधारणा में थोड़ा परिवर्तन अवश्य आया। उस समय अमरीका के ए टी एंड टी (AT & T) प्रयोगशाला के पीटरशोर ने बड़ी संख्या के गुणनखंड करने के लिए एक क्वांटम कलन विधि निकाली। उसके बाद 1996 में अमरीका के ही बेल प्रयोगशाला के लोव ग्रोवर ने क्वांटम सर्चिंग एल्गोरिद्म (प्रतीक गणित) की खोज की जिसके आधार पर गोपनीय कोड को क्वांटम कंप्यूटर की सहायता से $0(\sqrt{N})$ बार में तोड़ सकेंगे जबकि क्लासिकल यांत्रिकी में 0 (N) बार प्रयत्न करने पड़ेंगे। इस आधार पर यह आशंका व्यक्त की जा रही है कि यदि भविष्य में कभी क्वांटम कंप्यूटर बना तो आज प्रचलित क्रिप्टोग्राफी पूर्णतः छिन्न-भिन्न हो जायेगी।

क्वांटम यांत्रिकी एक ओर कोड बनाने में सहायक बनी है तो वहीं दूसरी ओर इसने उसे तोड़ने का मार्ग भी प्रशस्त किया है। 'हिजनबर्ग के अनिश्चितता' के सिद्धांत के आधार पर किसी भी कण के दो संपूरक चलायमान प्राचल जैसे संवेग तथा स्थिति का सही मान जानना मूलतः असंभव है। यही क्वांटम यांत्रिकी द्वारा बतायी गयी मर्यादा क्वांटम कोड बनाने के लिए मूल स्रोत बनी। फलतः किसी कोड को तैयार करने में 'नॉनआर्थोगोनल' क्वांटम अवस्थाओं का प्रयोग किया जा सकता है। किसी फोटॉन की चार संभावित ध्रुवण अवस्थाओं में उनके ध्रुवण का सही मापन लगभग असंभव है। इस प्रकार चाबी वितरण समस्या को कुछ हद तक क्वांटम चाबी वितरण द्वारा हल कर सकते हैं। मुख्य पृष्ठ पर दिया गया चित्र इसका एक स्वरूप बताता है। इसमें दो नॉनआर्थोगनल क्वांटम अवस्थाओं का उपयोग किया गया है। फ़ेज $\phi_A$ तथा $\phi_B$ और दोनों व्यतिकरममापियों में उचित वायुगैप की सहायता से क्वांटम सुरक्षा का प्रयत्न किया गया है। इससे संबंधित पहला और ज्ञात कोड का नाम है BB84 प्रोटोकॉल [यह चार्ल्स बैनेट (B) और गिल्स ब्रासार्ड (B) के नामों पर रखा गया है।]

क्या गोपनीय चाबी का यह क्वांटम कोड वितरण पूर्णतः सुरक्षित है, यह तो समय ही बता पायेगा। वैसे भी क्वांटम कंप्यूटर अभी ड्राइंग बोर्ड यानी प्रारंभिक अवस्था में है हालांकि क्वांटम क्रिप्टोग्राफी के कुछ प्रारूप तैयार हो चुके हैं। इस पद्धति की सबसे अहम् खूबी यह है कि इसकी सुरक्षा क्वांटम यांत्रिकी के मौलिक सिद्धांत पर आधारित है न कि आम क्रिप्टोग्राफी में प्रयुक्त अप्रमाणित (unproven) गणनात्मक अभिधारणाओं पर। यह एक उल्लेखनीय तथ्य है कि छोटे साइज के क्वांटम चाबी वितरण आज की तकनीकी क्षमताओं के अनुरूप हैं और कुछ वर्षों में व्यावसायिक स्तर पर उपलब्ध भी हो सकेंगे।

●

प्रस्तुत अंक वर्ष 2000 का अंतिम यानी अक्तूबर-दिसंबर अंक है। इसमें लेख, टिप्पणियां, समाचारों के अतिरिक्त विज्ञान नाटक, कथा, कविताएं भी समाहित हैं। हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद की वार्षिक रिपोर्ट का भी इसमें समावेश पाठकों को परिषद की अन्य गतिविधियों की जानकारी हेतु किया गया है। अंक 31(4) तक में छपे लेखों की अनुक्रमणिका की अंतिम किस्त दी गयी है। लेखकों की सुविधा एवं जानकारी के लिए "वैज्ञानिक" में प्रयुक्त वर्तनी संबंधी कुछ नियमों को दिया गया है ताकि वे उनका प्रयोग करें। पाठकों की प्रतिक्रियाओं में हुई बढ़ोत्तरी हमारे लिए प्रसन्नता का विषय है। इसके लिए हम उनके हृदय से आभारी हैं। नव वर्ष के लिए हमारी ओर से शुभकामनाओं के साथ यह अंक सभी पाठकों के लिए प्रस्तुत है।

**–डॉ. गोविंद प्रसाद कोठियाल**

# मादक पदार्थ - उपयोग एवं दुरुपयोग

डॉ. अवधेश शर्मा, वैज्ञानिक,
केंदीय ईंधन अनुसंधान संस्थान,
पो. बॉक्स - 41, बिलासपुर (छ.ग.) - 495 001

**आजकल अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर मादक पदार्थों का गुप्त रूप से व्यापार बड़े पैमाने पर हो रहा है। दुनिया का कोई भी ऐसा देश नहीं जहां इस धंधे के खतरनाक अपराधी अमरबेल की तरह समाज के युवा वर्ग को अपने शिकंजे में कसे हुए न हों। हालांकि प्रतिवर्ष करोड़ों रुपये के मादक द्रव्यों की पकड़ होती है फिर भी, यह व्यापार दावानल की तरह और बढ़ता ही जा रहा है। ये पदार्थ चिकित्सा विज्ञान में औषधि के रूप में इस्तेमाल किये जाते हैं अतः बाजार में सामान्य रूप से उपलब्ध रहते हैं। औषधि के रूप में ये पदार्थ जीवनदान देने की भूमिका का निर्वाह करते हैं परंतु आजकल इसके हो रहे दुरुपयोग ने समाज में एक नया संकट ला खड़ा कर दिया है। प्रस्तुत लेख में इन मादक पदार्थों के विषय में कुछ जानकारी व उनके प्रभाव पर प्रकाश डाला गया है।**

मादक द्रव्यों की पहचान, उत्पत्ति, उपयोग एवं दुरुपयोग जैसे पहलुओं पर जिज्ञासा होना स्वाभाविक है। कोई भी प्राकृतिक या संश्लेषित रासायनिक पदार्थ सजीव प्राणी में मादकता उत्पन्न कर उसके अवयव संस्थान में शारीरिक, मानसिक एवं मनोवैज्ञानिक परिवर्तन पैदा करता है उसे मादक पदार्थ कहा जाता है। ऐसे पदार्थ अपनी रासायनिक प्रकृति के कारण सजीव प्राणी में मानवीय अवयवों की क्रियाशीलता एवं ढांचे में भी परिवर्तन कर देते हैं। इसलिए जो पदार्थ मनुष्य की मनोदशा, चेतना, अनुभूति, शारीरिक एवं मानसिक क्रियाओं में परिवर्तन करता है, मादक द्रव्य की श्रेणी में आता है।

ये पदार्थ या तो प्राकृतिक रूप से मिलते हैं या कृषि पैदावार के रूप में प्राप्त किये जाते हैं जिससे बाद में रासायनिक प्रक्रिया द्वारा द्रव्यों में रुपांतरित किया जाता है। प्राकृतिक रूप से प्राप्त पदार्थों में अफीम, कोकीन, गांजा, भांग, हशीश, मेरिजुआना, चरस, पेयोटी, खाट आदि प्रमुख हैं। ये प्राकृतिक वानस्पतिक स्वतः ही उगते हैं। इनमें से कुछ को लाइसेंस प्राप्त कर नियंत्रित तरीके से कृषि पैदावार के रूप में भी उगाया जाता है।

रासायनिक एवं संश्लेषित पदार्थों में दो किस्में होती हैं। पहली सम-संश्लेषित-इसका मूल आधार तो प्राकृतिक होता है लेकिन प्राप्त करने के लिए हल्की प्रक्रिया से गुजारा जाता है। इस वर्ग में मार्फिन, हिरोइन, कोडिन प्रमुख हैं। दूसरी है - पूर्णसंश्लेषित - ये रासायनिक तत्त्वों के आधार पर रासायनिक प्रक्रियाओं से प्रयोगशालाओं में बनाये जाते हैं। इनमें तीन वर्ग मार्फिन, मेथाडीन तथा पेथीडीन आते हैं (तालिका-1)

मादक पदार्थों की शरीर पर प्रतिक्रिया की दृष्टि से उन्हें तीन वर्गों में बांटा गया है - उत्तेजक (स्टीम्यूलेट), अवसादक (डिप्रेसेंट) और भ्रांतिजनक (सेडेटिव्स / हेल्यूसीनोजीन)। उत्तेजक वर्ग में अफीम, कोकीन, गांजा, मार्फिन, हिरोइन, कोडीन आदि आते हैं। अवसादक एवं भ्रांतिजनक द्रव्यों को चार भागों में विभाजित किया गया है जो शरीर पर प्रभाव की दृष्टि से दीर्घकालिक, मध्यम-दीर्घकालिक, अल्पकालिक एवं परा-अल्पकालिक होते हैं। इन द्रव्यों के वाणिज्यिक नाम भी तालिका-1 में दिये गये हैं। तस्करी में इन द्रव्यों के नाम बदल

## तालिका - 1 : मादक पदार्थों का वर्गीकरण एवं वाणिज्यिक नाम

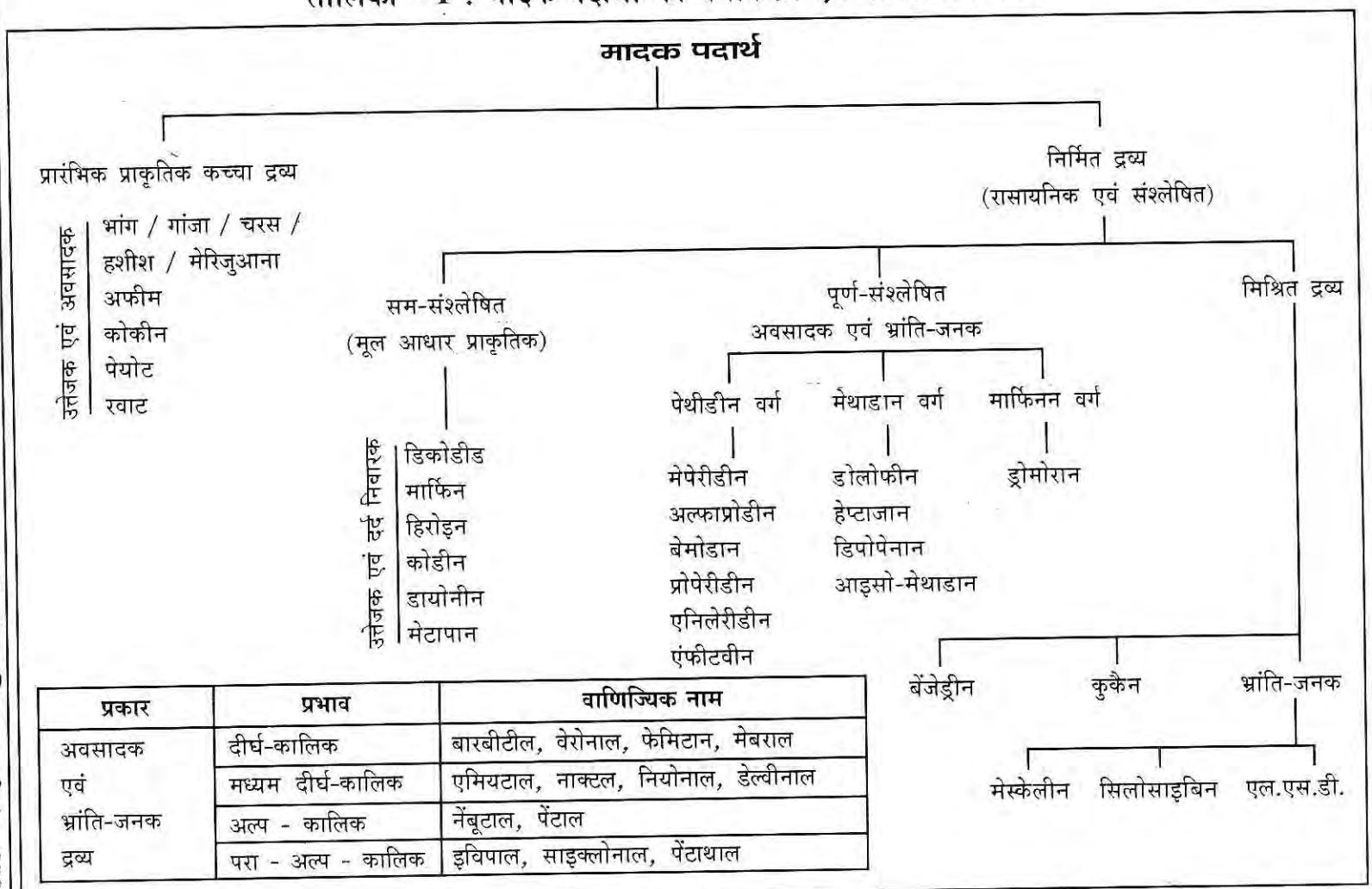


| प्रकार | प्रभाव | वाणिज्यिक नाम |
|---|---|---|
| अवसादक एवं भ्रांति-जनक द्रव्य | दीर्घ-कालिक | बारबीटील, वेरोनाल, फेमिटान, मेबराल |
| | मध्यम दीर्घ-कालिक | एमियटाल, नाक्टल, नियोनाल, डेल्वीनाल |
| | अल्प - कालिक | नेंबूटाल, पेंटाल |
| | परा - अल्प - कालिक | इविपाल, साइक्लोनाल, पेंटाथाल |

दिये जाते है जैसे कोक बर्निस, लेडी डामा, शी, स्नो, कोबरा, बीड आदि-आदि । हांलाकि इन मादक पदार्थों में कई ऐसे हैं जिन्हें औषधि के रूप में इस्तेमाल किया जाता है, जैसे मार्फिन दर्द की एक कारगर दवा है । इसी तरह मेरिजुआना, ग्लुकोमा रोग की अचूक दवा है, साथ ही कैंसर निवारण में भी काम आता है । इन पदार्थों का औषधि के रूप में उपयोग / उपचार तालिका-2 में उल्लिखित है ।

## प्रारंभिक प्राकृतिक पदार्थ :

इस वर्ग में हेंप (कैनाबीस), अफीम, कोक, पेयोट तथा खाट आते हैं ।

**हेंप** : यह पौधा भारत में भांग/गांजा/चरस, अल्जीरिया एवं मक्का में कीफ, तुर्की में नशा, सीरिया तथा केबनान में हशीश, मध्य अफ्रीका एवं ब्राजील में जांबा, दक्षिण अफ्रीका में दग्गा तथा उत्तरी अमरीका में मेरिजुआना के नाम से जाना जाता है ।

**अफीम** : इसे अफीम के पौधे से तैयार किया जाता है । चूंकि इसमें मार्फिन होता है अत: यह एक मुख्य मादक पदार्थ बन गया है । डायरिया के उपचार में इसका उपयोग किया जाता है ।

**कोक** : इसकी पत्तियों का उपयोग दवा के रूप में सैकड़ों साल से होता आया है । पत्तियों को चबाया जाता है । इसका व्यसन करने वालों को एक आनंददायक अनुभूति होती है ।

**पेयोट** : यह पौधा कैक्टस जाति का है जो मेक्सिको में स्वत: ही उगता है । मादकता के रूप में इसका प्रभाव कैनाबीस की तरह ही होता है । चिकित्सा के क्षेत्र में इसका उपयोग सरदर्द, रक्तस्त्राव, ज्वर एवं क्षय रोगों के उपचार में किया जाता है । मेस्केलीन इसी का उपोत्पाद है ।

**खाट** : इसे कत्था या अफ्रीकी चाय के नाम से जाना जाता है । उत्तेजक के रूप में प्राचीन समय से ही इसका उपयोग होता आया है । अधिक मात्रा में सेवन करने से आनंद की अनुभूति तो होती है पर लंबे समय के बाद पागलपन का दौरा प्रारंभ हो जाता है । अरब और अफ्रीका के कई देशों में इसका उपयोग गोनोरिया, मलेरिया, दमा, खांसी आदि रोगों के उपचार में किया जाता है ।

## सम-संश्लेषित (मूल आधार प्राकृतिक) :

**मार्फिन** : यह अफीम का मुख्य क्षाराभ (एल्केलॉइड) है । बहुत प्राचीन समय से ही दवा के रूप में इसका उपयोग होता रहा है । 8-15 माइक्रोग्राम (माग्रा.) की मात्रा एक आनंददायक अनुभूति एवं पेशियों में आराम देती है, चिंतामुक्त करती है, नये विचारों को जन्म देती है तथा भय को समाप्त कर देती है । भूख नहीं लगती । लेकिन इसकी अधिक मात्रा (15-20 माग्रा.) से व्यक्ति गहरी निद्रा में चला जाता है तथा मायावी सपनों में खो जाता है ।

**हिरोइन** : यह बहुत ही तीव्र कार्यकारी मादक द्रव्य है । इसमें मार्फिन की तरह के ही गुण होते हैं । व्यसन के तौर पर इसका बड़े पैमाने पर दुरुपयोग होता है । इसकी चिकित्सीय मात्रा 5-10 माग्रा. होती है । इसे मार्फिन के एसीटीलेशन द्वारा प्राप्त किया जाता है ।

**कोडीन** : यह एक कमजोर मादक द्रव्य है । व्यसन के तौर पर इसका उपयोग कम ही होता है । इसे भी अफीम द्वारा प्राप्त किया जाता है ।

डायोनीन : यह मार्फिन एवं कोडीन के बीच वाला गुण रखता है तथा संमोहक एवं दर्द-निवारक द्रव्य के रूप में इस्तेमाल किया जाता है । इसे मार्फिन द्वारा प्राप्त किया जाता है ।

**मेटापान** : यह मार्फिन की तरह दर्द-निवारक मादक द्रव्य है । 3-5 माग्रा. मेटापान 10 माग्रा. मार्फिन के बराबर होता है ।

## पूर्ण-संश्लेषित द्रव्य :

ये द्रव्य मार्फिन के प्रभाव की तरह ही होते हैं तथा आसानी से सस्ते रूप से प्रयोगशालाओं में बनाये जाते हैं । चिकित्सा के क्षेत्र में इनका उपयोग बड़े पैमाने पर होता है । सहज उपलब्धता के कारण व्यसन के लिए इन द्रव्यों का उपयोग आजकल धड़ल्ले से हो रहा है । इन द्रव्यों को तीन मुख्य वर्गों में बांटा गया है ।

**पेथाडीन वर्ग** : इस वर्ग के द्रव्यों का बड़े पैमाने पर दर्द निवारक के रूप में उपयोग किया जाता है क्योंकि इनका भौतिक गुण मार्फिन के समान है । इस वर्ग के द्रव्यों की मात्रा 100-150 माग्रा. निर्धारित है । इसका प्रभावी समय मार्फिन से थोड़ा कम ही होता है ।

## तालिका-2 मादक पदार्थ एवं चिकित्सीय उपयोग

| पदार्थ / द्रव्य | उपयोग / उपचार | औषधीय मात्रा (माग्रा.) | मादकता मात्रा (माग्रा.) |
|---|---|---|---|
| भांग / गांजा / चरस / हशीश / मेरिजुआना | दर्द निवारण एवं निश्चेतक के रूप में जोड़ों के दर्द, पेचिस, अतिसार, हिस्टीरिया, हैजा | - | - |
| अफीम | दमा, कफ, अतिसार, पेचिस, पेट-दर्द, मलेरिया, मधुमेह | - | - |
| कुकेन | नाक संबंधी रोग (सर्दी, जुकाम, सूजन) | - | - |
| खाट | मलेरिया, दमा, खांसी, प्लेग, गोनोरिया एवं आमांशयिक रोग | - | - |
| मार्फिन | पेट पेशियों एवं जोड़ों के दर्द में निश्चेतक के रूप में | 8-15 | 15-20 |
| हिरोइन | खांसी, निश्चेतक के रूप में | 5-10 | 10-15 |
| कोडीन | श्वासावरोध एवं दर्द निवारण में | 5-15 | 15-25 |
| डायोनीन | आंख के रोगों में | 10-15 | 15-30 |
| मेटापान | पुराने कैंसर एवं दर्द निवारण में | 3-5 | 5-10 |
| डिकोडीड | श्वास रोग में, टांसिल, पल्मोनरी टी. बी., ब्रांकांइटिस, हृदय रोग में | 5-8 | 8-15 |
| पेथीडीड वर्ग | दमा, प्रसवोपरांत दर्द निवारण एवं निश्चेतक के रूप में | 40-60 | 60-200 |
| मेथाडान वर्ग | शल्य क्रिया के बाद दर्द निवारण में, निश्चेतक के रूप में | 5-15 | 15-30 |
| मेस्केलीन | निश्चेतक के रूप में | <5 | >5 |
| सिलो साइबिन एल. एस. डी. | मनःचिकित्सा एवं चेता विज्ञान में | 50-70 | 70-150 |

प्रसाविकी वेदना के निवारण में इस वर्ग के द्रव्यों का उपयोग मुख्य रूप से होता है। निश्चेतक के रूप में अब इनका उपयोग भी होने लगा है। इन्हें यदि दस हफ्तों तक 150 माग्रा. की मात्रा में लिया जाय तो व्यसन बन जाता है।

**मेथाडान वर्ग :** मुख्यतः यह दर्द निवारक है। यह मार्फिन की तरह ही प्रभावशाली है। इसकी अधिक मात्रा हानिकारक है। मार्फिन व्यसन को इस द्रव्य के उपयोग से समाप्त किया जाता है। चूकिं इससे विपरीत प्रभाव नहीं पड़ते इसलिए व्यसनी इसका इस्तेमाल करते है क्योंकि यह मार्फिन की तुलना में दस गुना अधिक प्रभावकारी होता है। इस वर्ग के द्रव्य पेथीडीन वर्ग के द्रव्यों से दो गुना जहरीले होते हैं परंतु इनकी दर्द निवारण क्षमता दस गुना अधिक होती है।

**मार्फिनन वर्ग :** इन द्रव्यों की दर्द निवारण क्षमता मार्फिन की तुलना में चार गुना अधिक होती है पर जहरीला प्रभाव दस गुना ज्यादा होता है। इसकी मात्रा 5 माग्रा. है। इन्हें निश्चेतक के रूप में इस्तेमाल किया जाता है।

## मिश्रित एवं भ्रांतिजनक

ये द्रव्य भ्रम पैदा करते हैं । इन्हें खाने के बाद व्यक्ति संवेदना खो देता है । कुछ समय के लिए उसकी स्मरण शक्ति, बात करने की क्षमता, समय का भान आदि का लोप हो जाता है । चेहरा अत्यंत लुभावना तथा आवाज अत्यधिक सुरीली हो जाती है । दूरी का ज्ञान समाप्त हो जाता है । जब प्रभाव अधिक हो जाता है तब व्यक्ति माया एवं दर्शन की दुनिया में पहुंच जाता है । 'मैं कौन हूं' - जीवन का अर्थ क्या है ? आदि विचार आने लगते हैं । बहुत से लेखक एवं संगीतज्ञ एल. एस. डी. खाकर अपने हूनर में और सुधार कर लेते हैं । एल. एस. डी. की तरह दूसरा द्रव्य सिलोसाइबिन है । इसका प्रभाव एल. एस. डी. की तरह होता है लेकिन मात्रा अधिक लेना पड़ता है । एल. एस. डी. जहां 70 माइक्रोग्राम लेना होता है वही सिलोसाइबिन 5000-10000 माइक्रोग्राम लेना पड़ता है । ये दोनों द्रव्य सैंडोज कंपनी द्वारा बनाये जाते हैं ।

इन मादक पदार्थों के व्यसन की शुरुआत कैसे होती है ? ऐसा देखा गया है कि कॉलेजों में जो नये-नये विद्यार्थी आते हैं उन्हें एक नये माहौल/वातावरण का आभास होता है जहां पर अपने साथियों के साथ शराब और सिगरेट पीना शुरु कर देते हैं । तथा धीरे-धीरे खतरनाक मादक पदार्थों को भी लेने लगते हैं । कुछ छात्र हीन मानसिक भावना के कारण तथा कुछ की पारिवारिक परिस्थितियां इन पदार्थों को लेने के लिए उत्प्रेरित कर देती हैं । ये मादक पदार्थ उन्हें मानसिक एवं भावनात्मक तनावों से दूर तो करती ही हैं साथ ही एक नयी ऊर्जा का संचार भी कर देती हैं । प्रारंभिक अवस्था में इन पदार्थों के लेने वालों का पता नहीं चल पाता लेकन तब-तक कोई भी डाक्टरी सहायता बेकार हो चुकी होती है । बहुत से तो इन द्रव्यों को सिरिंज के माध्यम से सीधे नसों में पहुंचाते हैं । सबसे खतरनाक बात तो यह है कि एक ही सिरिंज को कई लोग इस्तेमाल करते हैं जिससे विभिन्न रोग, मलेरिया, सिफलिस, टिटेनस तथा एड्स भी होने का खतरा बना रहता है ।

मादक द्रव्यों के सेवन करने वालों पर समय-समय पर सर्वेक्षण होते रहे हैं । हाल ही में न्यूजवीक ने एक सर्वेक्षण किया था जिसके तहत मात्र दिल्ली में ही हिरोइन के सेवन करने वालों की संख्या 15 लाख के करीब है । हालांकि देश में इन पदार्थों के व्यसनियों का कोई आंकड़ा उपलब्ध नहीं है फिर भी यह अनुमान लगाया गया है कि इनकी संख्या 5 से 7 करोड़ है ।

एक समय था जब कुकेन (कोक) बहुत ही महंगा और ग्लैमरयुक्त मादक पदार्थ था लेकिन आजकल यह इतना सस्ता और आसानी से उपलब्ध है कि कोक देश एंडिज में छोटे-छोटे बच्चे सड़कों पर बेचते हैं । एंडिज से ही यह अमरीका, यूरोप और फिर एशियायी देशों में विभिन्न माध्यमों से आ पहुंचा है ।

विश्व स्वास्थ्य संगठन के एक ताजा रिपोर्ट में कहा गया है कि पिछले 30 वर्षों में इन पदार्थों का दुरुपयोग लगभग चार गुना बढ़ गया है । हांलाकि इस संबंध में प्रभावित देशों ने अनेक कड़े कानून बनाये हैं फिर भी इसका दुरुपयोग कम नहीं हुआ है । अब तो यह एक अंतर्राष्ट्रीय उद्योग का रूप ले चुका है जिसमें करोड़ों डॉलर का लेन-देन शामिल है ।

□□□

# कचरे से कंचन की असीम संभावनाएं

**डॉ. दिनेश मणि,** डी. एस-सी.
पूर्व संपादक, "विज्ञान", विज्ञान परिषद प्रयाग,
महर्षि दयानंद मार्ग, इलाहाबाद - 211 002

**नगरीय एवं औद्योगिक ठोस अपशिष्ट मानव सभ्यता के लिए विकराल समस्या के रूप में उभर कर आयी है। परंतु इनके समुचित उपयोग से इस समस्या का निदान संभव है। प्रस्तुत लेख में इन ठोस अपशिष्टों के वैज्ञानिक तरीके से प्रबंधन एवं उपयोग पर प्रकाश डाला गया है।**

नगरीय ठोस अपशिष्टों के अत्यधिक मात्रा में उत्पादित होने के कारण इन्हें पुनः उपयोग करना ही सबसे उचित उपाय है। हमारे देश में लगभग 60 प्रतिशत ठोस अपशिष्ट गड्ढे भरने में निपटाये जाते हैं। इस प्रकार की भूमि को सैनिटेरी लैण्ड-फिल का नियमित रूप देकर इन्हें अपशिष्टों से भर कर निचली भूमि को उठाना अथवा उबड़-खाबड़ भूमि को अच्छा आकार दिया जा सकता है और एक उद्यान के रूप में विकसित किया जा सकता है। उदाहरण के रूप में हमारे सामने आज नयी दिल्ली स्थित "राजीव गांधी स्मृति वन" है जो कि एक सैनिटरी लैण्ड-फिल पर तैयार किया गया है।

अमरीका के कुछ नगरों में कूड़े में से छिलके, पत्तियां, फूल-फल आदि खाने योग्य सामग्री निकालकर धोकर सुअरों को खिलाये जाते हैं। इस प्रकार उसका कुछ उपयोग हो जाता है किंतु अखाद्य पदार्थ से इन पदार्थों को सावधानी से अलग करना पड़ता है। सुअरों को पालने के लिए उपयुक्त क्षेत्र चाहिए। स्थान ऐसा होना चाहिए जहां पानी प्रचुर मात्रा में मिल सके और गंदा पानी जहां से सुगमता से बह जाये। स्थान नगर से बहुत दूर भी न हो, अन्यथा वहां तक छिलके आदि पहुंचाने में अधिक व्यय करना पड़ेगा। सुअरों को खिलाने का स्थान पक्का होना चाहिए। उनके मलमूत्र को खेतों में पहुंचाने का प्रबंध होना चाहिए। कूड़े-करकट पर पाले गये सुअरों में हैजा होने का डर रहता है इसलिए उन्हें पहले से इन्जेक्शन देना पड़ता है। उनके मांस में 'ट्रिकिना" नामक कीड़ों के रहने की विशेष (साधारण से लगभग चौगुना अधिक) आशंका रहती है। फलस्वरुप उनका मांस खाने वालों को भी रोग होने की आशंका रहती है। अतः यह व्यवस्था बहुत अच्छी नहीं कही जा सकती।

अधिकांश स्थानों में कूड़े-करकट को घूमते हुए बेलनाकार चलचित्रों में गिराया जाता है जिससे महीन धूल और राख अलग हो जाती है। फिर उनके चलते हुए पट्टे पर गिरा दिया जाता है, जहां से बड़े-बड़े चुंबक कूड़े में पड़े टीन / लोहे के डिब्बों आदि को उठा लेते हैं। इनको मशीन से दबाकर और चिपटा करके गट्ठर बांध दिये जाते हैं, जो लोहे के कारखानों में पिघलाने के लिए भेज दिये जाते हैं। शेष कूड़े पर पंखों की हवा डालकर कागज और चीथड़ों को पृथक कर लिया जाता है। इसके भी गट्ठर बना लिये जाते हैं जो कागज के कारखानों में भेज दिये जाते हैं। शेष कूड़े को जला दिया जाता है।

कूड़ा जलाने वाले यंत्रों को इंग्लैंड में डिस्ट्रक्टर तथा अमरीका में इनसिनेरेटर्स कहते हैं, बहुधा ये नगर के लगभग बीच में रहते हैं, जिससे कूड़े को ढोने में अधिक खर्चा नहीं होता। यदि कई स्थानों में कूड़ा-नाशक बने रहते हैं तो कूड़ा ढोने का व्यय और भी कम पड़ता है। साधारणतया कूड़ा बिना अतिरिक्त कोयला मिलाये ही जल सकता है परंतु जहां साग-पात अलग

नहीं किया जाता वहां कुछ कोयला (पत्थर कोयला) मिलाना पड़ता है। प्रबंध ऐसा किया जाता है कि भट्टी की लौ पहले कच्चे कूड़े पर से होकर जाती है और फिर सूखा कूड़ा भट्टी में पहुंचता है। भट्टी में वायु साधारणतया यंत्रों में बलपूर्वक पहुंचाई जाती है। भट्टी तक पहुंचने पर वायु का दाब दो तीन इंच पारे के दाब के बराबर होना चाहिए। तब कूड़ा बहुत तीव्रता से (लगभग 1200 डिग्री से. ग्रे. पर) जलता है अन्यथा ताप लगभग 700 डिग्री से. ग्रे. ही होकर रह जाता है। इस ताप पर दुर्गंध पूर्णतया नष्ट नहीं होती। भट्टी से जाने वाली वायु को साधारणतया पहले से तरल कर लिया जाता है। इसके लिए चिमनी के मार्ग से बाहर जाने वाली गैसों से गर्मी मिल जाती है। बहुधा भट्टी में कई खंड होते हैं और ऐसा प्रबंध रहता है कि इन खंडों में पारी से कूड़ा गिरे। एक साथ पूरी भट्टी के खुल जाने से ताप कम हो जाने का डर रहता है। कूड़े की भट्टी की आंच से इंजन चलाये जाते हैं और बिजली उत्पन्न की जाती है। भट्टी से निकले जले कूड़े का उपयोग सड़क बनाने में किया जाता है।

कूड़े में वसा (तेल, चर्बी, घी) का अंश भी रहता है। कहीं-कहीं इसे पहले निकालकर फिर कूड़े को जलाते हैं। कूड़े से निकली वसा सस्ता साबुन, मोमबत्ती इत्यादि बनाने के काम आती है। कूड़े करकट में विद्यमान शीशे (कांच) के टुकड़ों को न तो जलाया जा सकता है और न इसकी खाद बनायी जा सकती है। अतः इनका उपयोग अधिकतर गड्ढ़ों को भरने में ही किया जाता है। पेरिस में पुराने चूने के पत्थरों की खदानों को भरने हेतु इन शीशों का ही प्रयोग किया जाता है।

नगरीय अपशिष्टों के उपयोग का एक प्रमुख तरीका इनसे ऊर्जा का उत्पादन करना है और इस ऊर्जा को नगर के कई उपयोगों में प्रयोग किया जा सकता है। इन अपशिष्टों में जैवीय पदार्थ अधिक होने के कारण इनके चयन अथवा प्रक्रिया के पश्चात् इन्हें उपयुक्त रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है। इन अपशिष्टों से ऊर्जा उत्पादन करने के तीन प्रमुख तरीके हैं -

क) इनका भस्मीकरण कर उससे उत्पादित ऊर्जा को प्रयोग में लाया जा सकता है।

ख) इनके एनारोबिक डाइजेशन द्वारा बायो-गैस का उत्पादन हो सकता है। बायो गैस ईंधन व रोशनी के रूप में उपयोग किया जा सकता है।

ग) इन अपशिष्टों की छंटाई करने के पश्चात् इनके पैलेट बनाकर ईंधन के रूप में उपयोग किया जा सकता है। ईंधन पैलेटों के उत्पादन से हमारे कोयले के भंडार अथवा लकड़ी की बचत हो सकती है।

इनके अलावा नगरीय ठोस अपशिष्ट के उपयोग का एक मुख्य उपाय इनसे कंपोस्ट तैयार करना है। यह कंपोस्ट खाद हमारे कृषि-उद्योग में प्रयोग की जा सकती है। अपशिष्टों में यदि शीघ्र सड़ने वाली वनस्पतियां हों तो कंपोस्ट एक अच्छी खाद बन जाती है। यह रासायनिक खाद के बदले में प्रयोग की जा सकती है जिससे हमारी भूमि को कुदरती पदार्थों की प्राप्ति होगी और रासायनिक खादों से बचा जा सकता है।

### औद्योगिक ठोस अपशिष्टों के कुछ उपयोग :

औद्योगिक ठोस अपशिष्टों का अत्यधिक मात्रा में उत्पादन होने के कारण इनका उचित प्रयोग ही एकमात्र उपाय है। इन अपशिष्टों से प्रदूषण की समस्या बहुत गंभीर होती जा रही है।

गैर-खतरनाक औद्योगिक अपशिष्टों के कई प्रकार के निर्माण कार्यक्रमों में उपयोग में लाना लाभदायक साबित हुआ है। कई विकासशील देशों में इस प्रकार की गैर-परंपरागत वस्तुओं को निर्माण कार्यों में अत्यधिक प्रयोग किया जाता है। इससे हमारी प्राकृतिक वस्तुओं के उपयोग में घटोत्तरी हो रही है।

### फ्लाई एश चिमनी की राख :

उदाहरण के तौर पर हमारे ऊर्जा उत्पादन कार्यालयों से उत्पादित होने वाली राख से ईंटे बनाने के तरीकों की खोज की जा रही हैं। प्रति वर्ष लगभग तीन करोड़ टन राख का उत्पादन होता है। ईंटें बनाने पर हमारी कुदरती मिट्टी का बचाव हो सकेगा।

इस राख को सिमेंट के साथ मिलाने की भी योजना की जा रही है। इस प्रकार की गैर-परंपरागत

वस्तुओं को उपयोग में लाने के प्रयत्न जारी हैं। इसके अलावा इस राख को कोयला खानों को भरने अथवा कृषि उद्योगों में भी उपयोग किया जा सकता है।

लोहा, चूना अथवा धातु मल भी अत्यधिक मात्रा में उत्पन्न होते हैं। इनको भी उपयोग में लाने के कुछ प्रयत्न जारी हैं। इन्हें सिमेंट में मिलाकर निर्माण कार्यों में उपयोग किया जा सकता है। इन्हें सड़क बनाने के कार्यों में भी उपयोग किया जा सकता है। कई ऐसे चूने तथा मल में धातु की मात्रा अधिक होने पर इन धातुओं की प्रति प्राप्ति भी की जा सकती है।

उर्वरक कारखानों से उत्पन्न होने वाले जिप्सम फास्पेजिप्सम की मात्रा दिन पर दिन बढ़ती जा रही है। इन्हें भी मजबूत भवन निर्माण सामग्री के रुप में प्रयोग में लाया जा सकता है। कई देशों में जिप्सम बोर्ड से पूरे घर तथा दफ्तरों की अंदरुनी दीवारें बनायी गयी हैं। इनकी दीवार छत फर्श इत्यादि बनाने की तकनीक उपलब्ध है।

इस प्रकार अन्य औद्योगिक अपशिष्ट (गैर खतरनाक) जैसे कि रैड-मड, लाइम-मड इत्यादि भी कुछ निर्माण कार्यों में प्रयोग किये जा सकते हैं। इन वस्तुओं को प्रयोग में लाने की तकनीक उपलब्ध है। हमें इन तकनीकियों को प्राप्त कर इनका सही प्रयोग करना होगा। इन अपशिष्टों के प्रयोग से हमारी कुदरती वस्तुओं की बचत होगी तथा इनसे हो रही प्रदूषण की समस्या भी हल हो जायेगी।

## खतरनाक अपशिष्टों का नियंत्रण :

पिछले चार दशकों से हमारे देश में रासायनिक उद्योगों की वृद्धि के कारण कई प्रकार के खतरनाक अपशिष्ट उत्पादित हो रहे हैं। इन अपशिष्टों को भूमि अथवा जलाशय में अविवेक से छोड़े जाने के कारण जलाशय, नालियों अथवा भूमि पर विषैले पदार्थ पाये जा रहे है। पर्यावरण संरक्षण, अधिनियम, 1986 के अंतर्गत परिसंकटमय अपशिष्ट (प्रबंध एवं हैंडलिंग) नियम, 1989 को सूचित किया गया है। इन नियमों के आधीन खतरनाक अपशिष्टों के उत्पादन, संग्रहण, शोधन परिवहन, आयात भंडारण अथवा व्ययन को नियंत्रित करना है। इन नियमों को सही प्रकार से लागू करने के लिए दिशा निर्देश पुस्तिका प्रकाशित की गयी है। इसमें खतरनाक अपशिष्टों के उत्पादन से लेकर निपटान तक के तौर तरीकों की विस्तृत जानकारी दी गयी है। सरकार की ओर से राज्यों में स्थित अभिकरण यंत्रों को भी सहायता दी जा रही है।

## औपसर्गिक अपशिष्ट :

जीव विज्ञान शिक्षा, शोधन पशु विज्ञान व पशु चिकित्सा तथा अस्पतालों अथवा चिकित्सा केंद्रों में उत्पादित कचरे को अविवेकपूर्ण तरीकों से निपटाया जाता है। यह अपशिष्ट पर्यावरण अथवा स्वास्थ्य के लिए हानिकारक सिद्ध हुआ है। इन अपशिष्टों से खतरनाक बीमारियां फैल सकती हैं जैसे कि हैजा, तपेदिक, कैंसर, एड्स इत्यादि। इन रोगों के कीटाणुओं के कारण पर्यावरण प्रदूषित हो सकता है। इन जीवित कीटाणुओं से प्रदूषित पर्यावरण को स्वच्छ बनाना असंभव होगा और यह मानव जाति के लिए खतरनाक सिद्ध हो सकते हैं।

यह अपशिष्ट प्रमुख रुप से औद्योगिक संस्थानों से उत्पन्न खतरनाक अथवा गैर खतरनाक सभी प्रकार के अपशिष्टों को मिलाकर नगर पालिका की भूमि पर फेंका जाता है। इस तरह के अपशिष्टों में रोगाणु तीव्रता से पनपते हैं। मुख्य तौर से इस प्रकार के संस्थानों में औपसर्गिक अपशिष्ट अथवा खतरनाक अपशिष्टों को छांट कर सूक्ष्म विधि से रोगाणुओं से मुक्त कर फेंका जाना चाहिए।

हम प्रति दिन विकसित देशों से टेक्नालॉजी अथवा व्यापार में बढ़ावा लेते देते समय इन विषयों की ओर ध्यान नहीं दे रहे हैं। विकसित देशों में अपशिष्ट एक बहुत बड़ी समस्या बन चुकी है परंतु हमारे लिए अभी भी इस विषय पर कुछ करने के लिए समय है। अब समय आ गया है कि न केवल सोच विचार करें परंतु इस विषय को महत्वपूर्ण समझते हुए इस पर कुछ सुझाव कार्यक्रम आरंभ करें।

*(कृपया शेष भाग पृष्ठ-17 पर देखें)*

# आयुर्वेद के बदलते आयाम

रिपुदमन कुमार, डॉ. संजीविना भंडारी,
संदीप पठानिया एवं डॉ. बृजलाल
जैवविविधता प्रभाग, हिमालय जैवसंपदा प्रौद्योगिकी संस्थान,
पालमपुर - 176 061 (हि. प्र.)

**आयुर्वेद प्राचीन एवं पारंपरिक चिकित्सा पद्धतियों में से एक है । यह एक प्रतिष्ठित तथा सुसंगठित चिकित्सा प्रणाली है । इसमें प्रारंभ से लेकर अब तक काफी उतार-चढ़ाव आये हैं । परंतु इसके सरल एवं व्यापक प्रयोजन के कारण यह चिकित्सा पद्धति जनमानस में निरंतर लोकप्रिय होती चली गयी । आज भी भारत में बड़ी संख्या में लोग रोजाना के सामान्य रोगों से छुटकारा पाने के लिए आयुर्वेद पर आधारित उपचारों पर ही निर्भर रहते हैं । आयुर्वेद अब मात्र एक स्वदेशी चिकित्सा प्रणाली न रह कर, धीरे-धीरे अंतर्राष्ट्रीय स्तर की चिकित्सा पद्धति के रुप में उभर रही है । इस प्राचीन चिकित्सा प्रणाली में भविष्य में औषधियों को नया स्वरूप प्रदान करने की अपार संभावनाएं हैं ।**

आयुर्वेद के पंचभूत सिद्धांत के अनुसार मानव शरीर पांच मौलिक तत्त्वों आकाश, वायु, जल, अग्नि एवं पृथ्वी से मिलकर बना है । आयुर्वेद की दृष्टि से मानव शरीर की समस्त जैविक क्रियाएं तीन घटकों : वात, पित्त और कफ द्वारा नियमित होती हैं जिन्हें त्रिदोष कहते हैं । शरीर में त्रिदोष के एक भी घटक के असंतुलन से रोग उत्पन्न होते हैं । अत: स्वस्थ जीवनयापन के लिए शरीर में इन तीनों घटकों का एक निश्चित अनुपात में होना आवश्यक है । इसलिए आयुर्वेद में रोगों का काल, ऋतु एवं अन्य परिस्थितियों के अनुरुप उपचार किया जाता है ।

आयुर्वेद में विभिन्न प्रकार के पौधे, जीव-जंतुओं तथा खनिज पदार्थों का प्रचुर मात्रा में प्रयोग होता है । ऋग्वेद में ऐसी बहुत सी आरोग्यकारी जड़ीबूटियों का उल्लेख किया गया है जो मानव तथा पशुओं दोनों के रोगों के उपचार में काम आती हैं । वैदिक साहित्य जैसे ऋग्वेद, यजुर्वेद तथा अथर्ववेद में प्राकृतिक संसाधनों का रोगों के उपचार संबंधी प्रमाण मिलते हैं ।

विभिन्न आयुर्वेदिक ग्रंथों में औषधीय पौधों का वर्णन किया गया है (तालिका-1) ।

तालिका-1
विभिन्न आयुर्वेदिक ग्रंथों में उल्लेखित पादप औषधियां

| मूलग्रंथ | वर्णित पौधों की संख्या |
|---|---|
| ऋग्वेद | 67 |
| यजुर्वेद | 81 |
| अथर्ववेद | 290 |
| चरक संहिता | 526 |
| सुश्रुत संहिता | 573 |
| अष्टांग हृदय | 902 |
| धन्वंतरि / राघ निघंटु | 750 |
| भावप्रकाश | 480 |
| मदनपाल निघंटु | 480 |
| कैयदेव निघंटु | 450 |
| सोडाल निघंटु | 499 |
| डिक्शनरी ऑफ इंडियन फोक मेडिसिन एंड ऐथेनोबॉटेनी | 2,500 |
| इंडियन मेडिसिनल प्लांट्स | 2,048 |
| ग्लॉसरी ऑफ इंडियन मेडिसिनल प्लांट्स | 2,577 |
| दी यूजफुल प्लांट्स ऑफ इंडिया | 5,000 |

## आयुर्वेद का इतिहास :

आयुर्वेद के संपूर्ण इतिहास के दौरान काफी उतार-चढ़ाव आये हैं। वैदिक काल आयुर्वेद का स्वर्णिम युग रहा है। इस युग के दौरान आयुर्वेद चिकित्सा प्रणाली का अपूर्व विकास हुआ। इसी विषय से संबंधित चरक संहिता (1000-800 बी. सी.), सुश्रुत संहिता (800-700 बी. सी.) एवं वाग्भट के अष्टांग हृदय जैसे विस्मरणीय प्राचीन ग्रंथों ने आयुर्वेद औषधि कोश को मज़बूती प्रदान की। आयुर्वेद अध्येताओं की औषधि महत्व के पौधों के बारे में अधिक से अधिक जानकारी हासिल करने की प्रबल इच्छाओं के फलस्वरूप निघंटु नामक संग्रहों की उत्पत्ति हुई। इन निघण्टुओं (जैसे राज निघंटु, मदनपाल, निघण्टु, कैयदेव निघंटु एवं शोडल निघंटु) का औषधि पौधों के संग्रह, संवर्धन, पर्यायवाची, परिरक्षण एवं दुर्लभ पौधों के विकल्प ढूंढने पर विशेष बल रहा।

औद्योगिक क्रांति के आगमन एवं इसके विश्व भर में बढ़ते प्रभाव के कारण औषधि पौधों के प्रलेखन एवं प्रयोजन की प्रक्रिया धीमी होती गयी। मुगलों तथा अंग्रेजों के आक्रमण, यूनानियों के प्रभाव, राजकीय संरक्षण के अभाव एवं आंतरिक कलह के कारण औषधि-पौधों के संग्रह में शिथिलता आयी। आयुर्वेद के पतन के अन्य कारण रहे हैं। विद्वानों में स्वाधिकार की भावनाएं तथा संबंधित क्षेत्र में कार्यरत लोगों के साथ सहयोग न करना। इस प्रकार तत्कालीन वैद्यों की हठधर्मिता एवं तर्कहीन सोच के कारण आयुर्वेद की दशा और भी दयनीय होती गयी। परिणामस्वरूप आयुर्वेद चिकित्सा को संदिग्ध, निष्क्रिय एवं निरर्थक माना जाने लगा। दुर्भाग्यवश यह अपने ही देश में जहां इसकी उत्पति हुई, सिर्फ एक गरीब समाज की औषधि बनकर रह गयी।

बीसवीं शताब्दी के आरंभ में लोगों को आयुर्वेद के महत्व का एहसास होने लगा और आयुर्वेद में शोध एवं विकास के लिए महत्वपूर्ण प्रयास प्रारंभ हुए। इस प्राचीन चिकित्सा शास्त्र के प्रति मानव की बढ़ती हुई जागरूकता के फलस्वरूप देश में औषधीय पौधों के विभिन्न पहलुओं पर व्यवस्थित अनुसंधान संस्थानों की स्थापना की गयी है। 1921 में कलकत्ता में स्कूल ऑफ ट्रॉपिकल मेडिसिन की स्थापना, आई.सी.ए.आर. द्वारा विषैले पौधों का अध्ययन और 1941 में जम्मू में औषधि अनुसंधान प्रयोगशाला की स्थापना इसके मुख्य उदाहरण हैं। बीसवीं सदी के अंत तक सभी को मूल स्वास्थ्य सुविधाएं प्रदान करने के उद्देश्य से 1970-80 के बीच में विश्व स्वास्थ्य संगठन (WHO) ने पारंपरिक चिकित्सा प्रणालियों की उन्नति एवं विकास के लिए एक कार्यक्रम आरंभ किया। आयुर्वेद को विश्व महत्ता वाली एक पारंपरिक चिकित्सा पद्धति के रूप में पहचाना गया।

भारत एवं विदेशों में विभिन्न अनुसंधान एवं विकास संगठनों ने बहुत से पादप विशेष प्रजातियों पर किये गये दावों को सत्यापित करने का अध्ययन प्रारंभ कर दिया है। हल्दी, नीम, करेला, जामुन के पेटेंट कुछ नवीनतम उदाहरण हैं जिन पर अमरीका में स्थित कुछ कंपनियों ने उनके चिकित्सा संबंधी गुणों के लिए उन को पेटेंट कर दिया है। घाव ठीक करने वाले गुणों वाली हल्दी के पेटेंट को, बाद में 'वैज्ञानिक एवं औद्योगिक अनुसंधान परिषद' द्वारा चुनौती दी गयी थी। अंततः सी. एस. आई. आर. इस पेटेंट को रद्द करवाने में सफल रही। यह सफलता केवल प्राप्त प्रामाणित प्रलेखों के कारण ही संभव हो सकी। हमारे समृद्ध स्वदेशी ज्ञान ने जड़ी-बूटियों से प्राप्त औषधियों के विकास के लिए देश में कई संस्थाओं को प्रेरित किया है, जैसे सी.सी.आर. ए.एस., सी.सी.आर.यू.एम., आई.सी.एम.आर., सी.एस. आई.आर. एवं आई.सी.ए.आर. आदि। जड़ी-बूटियों से प्राप्त औषधियों की बढ़ती हुई लोकप्रियता को ध्यान में रखते हुए स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय, भारत सरकार ने हाल ही में दो नयी परियोजनाएं शुरू की हैं; एक औषधि मानकीकरण एवं दूसरी औषधीय पौधों की कृषि-तकनीकी विकास के लिए। आयुर्वेद से संबंधित बहुत सी वैज्ञानिक शोध पत्रिकाएं जैसे इंडियन ड्रग्स, ऐंसिएन्ट साइंस ऑफ लाईफ, आरोग्य जीवनधाम, सचित्र आयुर्वेद आदि प्रकाशित होती हैं जो जनता में आयुर्वेद के महत्व को लोकप्रिय बनाने में

मुख्य भूमिका निभा रही हैं । इस प्राचीन चिकित्सा पद्धति को आधुनिक बनाने एवं नयी दिशा प्रदान करने हेतु समय-समय पर वैज्ञानिक संगोष्ठियां, कार्यशालाएं एवं सभाएं आयोजित की जाती हैं । कुल मिलाकर आयुर्वेद वर्तमान समय में विकास की ओर अग्रसर है ।

निम्नलिखित विशेषताओं के कारण आयुर्वेद के प्रति जनमानस में अपूर्व जागृति आयी है :

क) आयुर्वेदिक औषधियों की उत्पत्ति प्रमाणित तथ्यों पर आधारित है जो समय की कसौटी पर खरी उतरी हैं ।

ख) कुछ रोगों जैसे चर्म रोग, दमा, मधुमेह आदि का आधुनिक चिकित्सा प्रणाली में कोई उपचार नहीं है, परंतु आयुर्वेद में इन रोगों का निदान संभव है ।

ग) आयुर्वेदिक औषधियों के प्रयोजन से शरीर में दुष्प्रभाव (side effects) के बहुत कम अवसर हैं ।

घ) आयुर्वेदिक औषधियां सस्ती, आसानी से प्राप्य एवं जनसाधारण की पहुंच के भीतर है ।

उपर्युक्त गुणों के आधार पर आयुर्वेद को अब विदेशों यानि यूरोपीय एवं लैटिन अमरीकी देशों में भी प्रोत्साहन मिल रहा है । इससे स्पष्ट होता है कि आयुर्वेद अब एक अंतर्राष्ट्रीय चिकित्सा पद्धति के रूप में उभर रही है । उदाहरण के तौर पर संयुक्त राज्य अमरीका में महर्षि आयुर्विज्ञान विश्वविद्यालय है, जहां पश्चिमी पेशेवर चिकित्सकों को आयुर्वेदिक चिकित्सा शास्त्र में प्रशिक्षण दिया जाता है । इस तरह लोगों को अब स्वदेशी पादप औषधियों के महत्व का एहसास होने लगा है तथा आधुनिक औषधियों के दुष्प्रभावों से बचने के लिए अब लोग धीरे-धीरे आयुर्वेद चिकित्सा पद्धति को अपनाने लगे हैं ।

## औषधीय पौधों का संरक्षण :

पादप संरक्षण में सामाजिक तथा धार्मिक मान्यताओं का सीधा संबंध रहा है । आयुर्वेदिक साहित्य के अनुसार बहुत से पेड़-पौधे जैसे तुलसी, पीपल, बरगद एवं औषधीय महत्व की अन्य जड़ी-बूटियों को केवल सामाजिक एवं धार्मिक मान्यताओं के आधार पर संरक्षित किया जाता रहा है । बहुत से पेड़-पौधों को घर की क्यारियों तथा गांव के इर्द-गिर्द संरक्षित किया जाता है । संरक्षण की इस धारणा के फलस्वरूप ही आज हम बहुत से पेड़ पौधों को देख सकते हैं अन्यथा बहुत सी जडी-बूटियां अभी तक विलुप्त हो गयी होतीं । इसलिए आयुर्वेद की रोगों के उपचार के अलावा औषधीय उपयोग वाले पौधों के संरक्षण में भी अहम् भूमिका रही है ।

बीसवीं शताब्दी के आरंभ में प्राकृतिक संसाधनों से प्राप्त औषधियां जनसंख्या के एक उचित अनुपात में उपलब्ध थीं । परंतु आज मानव जनसंख्या में वृद्धि के कारण जड़ी-बूटियों के प्राकृतिक स्रोतों पर अपूर्व दबाव आ गया है जिससे बहुत से कीमती औषधीय पौधों के विलुप्त होने का खतरा बढ़ गया है । दूसरी चिकित्सा प्रणालियों की तरह आयुर्वेद भी एक निर्णायक दौर पर पहुंच गया है, क्योंकि 90 प्रतिशत आयुर्वेदिक औषधियां पौधों से ही निर्मित होती हैं । बाकी 10 प्रतिशत औषधियां जीव-जंतुओं एवं खनिज पदार्थों से तैयार की जाती हैं । लगभग 50 प्रतिशत उष्णकटिबंधीय वन संपदा का पहले ही काफी दोहन हो चुका है, जो पूर्व में जैविक विविधता का खजाना रहा है । दोहन की इस तीव्र प्रक्रिया ने भारतीय पौधों की लगभग तीन से चार हजार प्रजातियों को लुप्त होने की कगार पर ला दिया है । पर आयुर्वेद के प्रति पैदा हुई लोगों की रुचि के फलस्वरूप औषधि संबंधी पौधों और उनके संरक्षण के लिए कृषि तकनीकी के विकास के लिए बहुत से सरकारी एवं गैर-सरकारी संगठन सक्रिय हो गये हैं । आज राज्य एवं केंद्रीय सरकारें औषधीय महत्व की पादप संपदा के संरक्षण में एक जुट हो गयी हैं । संग्रह के माध्यम से अनुवांशिक विविधता को संरक्षित करने का कार्य राष्ट्रीय वैज्ञानिक एवं औद्योगिक अनुसंधान परिषद, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के कुछ केंद्रों एवं कुछ विश्वविद्यालयों में प्रारंभ हो चुका है । उत्तक संवर्धन (tissue culture) द्वारा दुर्लभ एवं महत्वपूर्ण औषधीय पौधों को संरक्षित एवं बढ़ाने के लिए भी बहुत से अनुसंधान एवं विकास संस्थान प्रयत्नशील हैं । भारत में कुछ वानस्पतिक उद्यान विशेष रूप से औषधीय पौधों

## तालिका - 2 : बाज़ार में विभिन्न रूपों में उपलब्ध आयुर्वेदिक औषधियां

| रूप / अवस्था | औषधि का नाम | प्रयोजन | निर्माता |
|---|---|---|---|
| टिकिया | गोक्षुरादि गुग्गुल गुटी | मूत्र कृच्छ | झंडु फार्मास्युटिकल वर्क्स लि. |
| | डाबर कांचनार गुग्गुल | गंडमाला व चर्म रोग | डाबर इंडिया लिमिटेड |
| | शटिपलोन | रक्त स्राव नियंत्रण व बचाव | दी हिमालयन ड्रग कंपनी |
| | पाईलेक्स | बवासीर | " |
| | सिस्टोन | मूत्रवर्धक | " |
| कैप्स्यूल | नोपेन | शंधिशोथ | बर्मन लैबोरेट्रीस लिमिटेड |
| | डाबर शिलाजीत कैप्स्यूल | यौवन शक्ति वर्धक | डाबर इंडिया लिमिटेड |
| | पुदीन हरा | पेट दर्द, गैस व अपाचन | " |
| क्रीम | विक्को टरमरिक | त्वचा सुरक्षा | विक्को लैबोरेट्रीस |
| | बोरो नेचुरल | शुष्क चर्म रोग, चोट व जलन | पारस फार्मास्युटिकल्स लिमिटेड |
| | बोरो सॉफ्ट | शुष्क चर्म रोग, चोट व जलन | " |
| सिरप | श्वासी | शामक एवं कफ निस्सारक | श्री धन्वंतरी आयुर्वेदिक फार्मेसी |
| | आयुर्वेदिक कॉन्सेप्ट्स | खांसी | दी हिमालयन ड्रग कंपनी |
| | कोफोल | खांसी | चरक फार्मास्युटिकल्स लिमिटेड |
| | बैद्यनाथ कस्मृता हर्बल | सर्दी, जुकाम, खांसी, नजला | श्री वैद्यनाथ आयुर्वेद भवन लिमिटेड |
| | लिव-52 | यकृत शोधक | दी हिमालयन ड्रग कंपनी |
| | लीवोमिन | यकृत शोधक | चरक फार्मास्युटिकल्स लिमिटेड |
| द्रव | सुधासिंधु | पेट दर्द, मरोड़, उल्टी व उबकाई | सुख संचरक कंपनी |
| | पुदीन हरा | पेट दर्द, गैस एवं अपाचन | डाबर इंडिया लिमिटेड |
| | डाबर जन्म घुंटी | शिशु वृद्धि व पेट रोग निरोधक | " |
| बाम | झंडु बाम | सिर दर्द, शरीर दर्द व जुकाम | झंडु फार्मास्युटिकल्स वर्क्स लि. |
| अवलेह | डाबर च्यवनप्राश | संक्रामक रोगों से बचाव | डाबर इंडिया लिमिटेड |
| साबुन | मेडीमिक्स | त्वचा सुरक्षा के लिए | त्रिवेनी आयुर्वेदिक रिसर्च फार्मास्युटिकल्स |
| चूर्ण | पंचसकार चूर्ण | विबंध | डाबर इंडिया लिमिटेड |
| | अश्वगंधा चूर्ण | साधारण दौर्बल्य व तनावरोधक | " |
| | सितोपलादि चूर्ण | कास व प्रतिश्याय | " |
| | तालिसादि चूर्ण | कास व छर्दि | " |
| | अविपित्तकर चूर्ण | अम्लपित्त, विबंध व उदरशूल | " |

के प्रतिपादन एवं संरक्षण के प्रति समर्पित हैं, जैसे टीबीजीआरआई तिरुआनंतपुरम, सीमैप (CIMAP) लखनऊ तथा बीएसआई एवं सीसीआरएस के जड़ी-बूटी उद्यान आदि ।

## आयुर्वेद में पशुचिकित्सा भी :

आयुर्वेद केवल मानव जाति के लिए ही नहीं बल्कि अन्य जीव-जंतुओं के लिए भी एक उपचार है । इसके विभिन्न उपचार संबंधी प्रयोजनों के आधार पर आयुर्वेद को विभिन्न वर्गों में बांटा गया है, जैसे अश्व-आयुर्वेद, गज-आयुर्वेद, गौ-आयुर्वेद, वृक्ष-आयुर्वेद, सगंध-आयुर्वेद आदि । हाल ही में दो भिन्न-भिन्न चिकित्सा प्रणालियों आयुर्वेदिक एवं ऐलोपैथिक के मेल से एक नयी शाखा "ऐलोवेद" की उत्पत्ति हुई है । ऐलोवेद में जहां ऐलोपैथी आयुर्वेद को आधुनिक तकनीकी दिशा देती है वहीं आयुर्वेद ऐलोपैथी को संभावित जीवन रक्षक औषधियों के विकास के लिए एक मज़बूत आधार एवं स्वरूप प्रदान करती है ।

पहले आयुर्वेदिक औषधियां अधिकतर भस्म, चूर्ण आदि के रूप में उपलब्ध होती थीं । मगर आज के इस वैज्ञानिक युग में हुए विकास के साथ-साथ पिछले कुछ वर्षों से आयुर्वेदिक औषधियों के निर्माण व रख-रखाव में भी काफी परिवर्तन आया है । आजकल बहुत सी आयुर्वेदिक औषधियां कैप्सूल, गोलियों तथा सिरप के रूप में आकर्षत पैकिंग में बाज़ार में उपलब्ध हैं (तालिका-2) ।

आज आयुर्वेद तथा पादप औषधियों के नाम पर अनधिकृत औषधि निर्माता बहुत सी जड़ी-बूटियों से औषधियों का निर्माण कर रहे हैं, जिसके कारण आयुर्वेद की लोकप्रियता कम होती है । प्रकृति से औषधीय पौधों के विलोप एवं मिलावट से बचने के लिए व्यापारिक स्तर पर पादप संवर्धन करना ही एक मात्र विकल्प है । देश में ऐसे सख्त कानून होने चाहिए जिनके लागू करने पर अवैध एवं मानकरहित औषधियों के उत्पादन पर अंकुश लग सके । इस तरह से अप्रमाणित औषधियों के विक्रय में प्रतिबंध लग जाने से सदियों पुरानी चिकित्सा पद्धति की विश्वसनीयता को बरकरार रखा जा सकता है ।

❐❐❐

## कचरे से कंचन की असीम संभावनाएं...

*(पृष्ठ-12 का शेष भाग)*

सभी प्रकार के अपशिष्ट (घरेलू, नागरिक, औद्योगिक, औपसर्गिक इत्यादि) को पहले छांटना आवश्यक है । इनकी छंटाई करने से हमें खतरनाक अपशिष्टों को अलग करने अथवा अन्य अपशिष्टों को पुन: प्रयोग में लाने की सुविधा रहेगी । खतरनाक अथवा औपसर्गिक अपशिष्टों का नियमित रूप से व्ययन करना चाहिए । अन्य लाभदायक अपशिष्टों को एक मुख्य साधन का रूप देकर इन्हें पुन: प्रयोग में लाना सबसे उचित उपाय है ।

इन समस्याओं का सबसे उत्तम उपाय अपशिष्टों के उत्पादन में घटौती करना है । यदि हम अपनी प्रत्येक क्रिया की ओर ध्यान दें तो हमें अपशिष्टों के कम करने की कई विधियां सूझेंगी । अत: यह आवश्यक है कि हम अपशिष्टों को कम करें और जो हैं उन्हें संपत्ति समझ कर पुन: प्रयोग करें ।

❐❐❐

विज्ञान नाटक

# 'पुष्पक रथ पर भानु और पार्वती'

गोरा चक्रबर्ती
रिएक्टर सुरक्षा प्रभाग, हॉल-7,
भा. प. अ. केंद्र, मुंबई - 400 085

**प्रस्तावना :** *भानु और पार्वती पुष्पक रथ में आसीन हैं । गंतव्य स्थल : चांद । कुछ ही क्षणों में पुष्पक रथ सेटेलाइट लॉंच वेहिकिल से उर्ध्वाकाश में प्रक्षेपित होगा । थुंबा प्रक्षेपण केंद्र में काउंट डाउन शुरू हो गया । दस, नौ, आठ, सात, छः, पांच, चार, तीन, दो, एक, शून्य...(रॉकेट प्रक्षेपण ध्वनि) ।*

भानु : दुर्गा, दुर्गा ! हम दोनों की यात्रा आरंभ । चांद में पहुंचने में सिर्फ तीन दिन लगेंगे ।

पार्वती : सुनते हो, लग रहा है कि मेरा शरीर बहुत वजनदार हो गया ।

भानु : ठीक ही तो हुआ । अभी रॉकेट प्रज्ज्वलन हेतु एक्सलरेशन, अर्थात त्वरण हो रहा है जिसे साराभाई केंद्र के वैज्ञानिक "जी" कहते हैं । इस "जी" का मान अभी बहुत बढ़ गया है । चिंता मत करो, सिर्फ तीन-चार मिनट का समय ही लगेगा ।

पार्वती : अरे सुनते हो, मैं हाथ हिला नहीं सकती । नाक में खुजली हो रही है, थोड़ा सा खुजली कर दो ना ।

भानु : क्या फचर-फचर शुरू किया । अभी पुष्पक रथ का कंट्रोल लेकर बैठा हूं । तुम्हारी नाक में कैसे खुजली करूं ?

पार्वती : मुझे अभी-अभी एक धक्के का अहसास हुआ ।

भानु : अभी-अभी रॉकेट के पहले स्टेज का बंगाल की खाड़ी में पतन हुआ । इसी कारण धक्के का अहसास हुआ । देखो देखो, लंकाद्वीप भारत के नीचे एक बिंदी जैसा लग रहा है ।

पार्वती : ठीक ही कहा तुमने । ठीक उसी तरह हम अपने ड्राइंग रूम में रखे ग्लोब में भी देखते हैं । भारत, बांगलादेश, बर्मा, सुमात्रा, जावा, बोर्नियो...।

भानु : धत् ! वो ग्लोब नहीं परंतु वो तो हमारी धरती है, सुंदर पृथ्वी ।

पार्वती : सुंदर पृथ्वी ? सुंदर कहां ! वृक्ष, वन, जंगल कुछ भी तो नहीं हैं, पत्थर सा लग रहा है, सब कुछ शुष्क - काष्ठम ।

भानु : ठीक कहा तुमने । रावण गणों ने सारे जंगल को साफ कर दिया है । जब मैं छोटा था तब मैंने किताब में पढ़ा था - सुजलम् सुफलम् । इसीलिए कहा सुंदर पृथ्वी । प्रिये, अब तैयार हो जाओ, एक और धक्का सा लगेगा जब लास्ट स्टेज रॉकेट जलेगा और हमारा पुष्पक रथ कक्ष-पथ यानी आरबिट में स्थापित होगा ।

पार्वती : कक्ष-पथ ? कैसे आलतू-फालतू पथ पर ले जा रहे हो ?

भानु : आलतू-फालतू पथ नहीं, कक्ष-पथ । आने के पहले कितनी बार कहा था कि रतन की विज्ञान पुस्तक थोड़ा पढ़ लो । कक्ष-पथ का मतलब है कि पुष्पक रथ एक वृत्ताकार पथ लेकर पृथ्वी की प्रदक्षिणा करेगा । वही पथ ।

पार्वती : हम लोग जा रहे हैं चांद में । पृथ्वी की प्रदक्षिणा क्यों करेंगे ?

भानु : अरे वो भी चंद्रयात्रा की प्रस्तुति का एक अंग है । वृत्ताकार कक्ष-पथ में रह कर थुंबा ग्राउंड कंट्रोल से सलाह लेनी पड़ेगी ।

पार्वती : अजी सुनते हो ! मुझे महसूस हो रहा है कि मैं हल्की - रुई जैसी हो गयी हूं । देखो,

देखो, मैं कैसे शून्य में उड़ रही हूं ।

भानु : हाऽ हाऽ हाऽ पार्वती ! हम लोग कक्ष-पथ में आ गये हैं । थोड़ा ध्यान से उड़ना ख़्याल रहे कि कहीं कोई स्विच-उईच के साथ टक्कर न हो जाय । पुष्पक रथ के चैंबर में बहुत यंत्र मौजूद हैं ।

पार्वती : मुझे बहुत अच्छा लग रहा है । पंछी जैसी उड़ सकती हूं । आश्चर्य चकित हूं ।

भानु : आश्चर्य चकित होने को क्या है । हम लोगों के ऊपर पृथ्वी के आकर्षण बल और वृत्ताकार कक्ष-पथ में गति के कारण विक्षेपण बल, दोनों एक हो गया है । इसी कारण हम लोगों का दैहिक वजन विलुप्त हो गया है । (थोड़ी देर) पार्वती, ऊपर से क्या देख रही हो ?

पार्वती : शीशे की खिड़की से बाहर का दृश्य देख रही हूं । समझे, अति मनोरम दृश्य ! चारों ओर कितने मणि और रत्न दिख रहे हैं ।

भानु : ये सब मणि और रत्न नहीं हैं । ये सब ग्रह या नक्षत्र हैं ।

पार्वती : अरे सुनते हो, यह मैं क्या देख रही हूं ?

भानु : जल्दी बताओ क्या देख रही हो ?

पार्वती : एक शीशे के बॉक्स में एक कुत्ता सो रहा है ।

भानु : क्या बोली ?

पार्वती : ठीक ही बोली, वह बॉक्स धीरे-धीरे बहुत दूर चला गया ।

भानु : पार्वती, तुम्हारा जीवन सार्थक हुआ । जिस कुत्ते को तुमने देखा उसका नाम "लाइका" है । सोवियत वैज्ञानिकों ने 1957 में स्पुतनिक उपग्रह से "लाईका" को अंतरिक्ष में भेजा था । बेचारा "लाईका" अवशेष भोजन न मिलने के कारण मर गया था । मृत "लाईका" आज भी पृथ्वी की परिक्रमा कर रहा है । ठहरो, लॉग-बुक में लिख देता हूं कि तुमने मृत लाईका को देखा था ।

पार्वती : (थोड़ी बाद) तुम मस्तक और कान में क्या लगा रहे हो ?

भानु : हेडफोन, ग्राउंड कंट्रोल के साथ बातचीत करनी होगी । देखती नहीं कि कंट्रोल पैनेल का बल्ब टिम-टिम कर रहा है । तुम ग्रह-नक्षत्र देखो, तब तक मैं ग्राउंड कंट्रोल के साथ बातें करता हूं । "हैलो ! हैलो ! पुष्पक रथ कंट्रोल । एस...आल्टीच्यूड ? ओ. के.... फ्यूल लेवेल ? ओ. के. ...नॉयज लेवेल हाई ? ...एस, एस । पार्वती टॉकिंग एंड फ्लाईंग हाई । ....नो नो... चैंबर ऑल राईट । ...पार्वती ? पार्वती अपार विंडो सीइंग । ओ. के. ...वी ईट एंड स्लीप । ... ओ. के. ओवर ।"

पार्वती : मेरा नाम लेकर क्या बोल रहे थे ?

भानु : छत की खिड़की के नीचे उड़ते हुए तुम गाना गा रही थीं, इसी कारण पुष्पक रथ में ध्वनि की मात्रा 15 डी. बी., अर्थात 15 डेसिबेल से ज्यादा हो गयी थी । ग्राउंड कंट्रोल उसका कारण पूछ रहा था । ग्राउंड कंट्रोल ने अभी कहा कि खाना खाकर सो जाइए ।

पार्वती : खाना ! ऐ सुनो, मैं उड़ते-उड़ते ही खाऊंगी ?

भानु : ठीक है । बटन दबा रहा हूं । खाने का पैकेट आ जायेगा । तब सोकर, बैठकर या उठकर, जैसी मर्जी हो खाना खा लेना । परंतु अनुरोध है कि खाते वक्त अपना मुंह प्लास्टिक सैक में डाल कर खाना । (थोड़ी देर बाद) कहां जा रही हो ?

पार्वती : टॉयलेट ।

भानु : जो भी करना है वह प्लास्टिक सैक के अंदर ही करना ।

पार्वती : क्या बोल रहे हो । सब कुछ प्लास्टिक सैक के अंदर, क्यों ?

भानु : नहीं तो खाद्य, मल, मूत्र तुम जिस तरह उड़ रही हो, सब कुछ पुष्पक रथ के चैंबर में उस तरह ही उड़ता ही रहेगा । उस प्लास्टिक सैक में "सकर" अर्थात् शोषणयंत्र लगा हुआ है । सब कुछ शोषण करके बाहर फेंक देगा ।

पार्वती : क्या सब गंदी बातें कर रहे हो । मैं टॉयलेट होकर आती हूं ।

भानु : (स्वगत) रास्ते में स्त्री जाति के साथ बहुत कठिनाइयां पैदा करता है, पर पार्वती के साथ नहीं । तर्क अवश्य करती है पर बातें मान लेती है । तीर्थ के लिए चांद पर जा रहा हूं, इसलिए पार्वती को भी साथ ले लिया । चांद के मारिया समुद्रतट से एक प्रस्तरखंड को गृहदेवता शालिग्राम शीला के साथ स्थापित करूंगा । इससे वंश की कीर्ति हमेशा बनी रहेगी । इसलिए रिटायरमेंट के पश्चात मिले पैसों से चांद पर जाने का टिकट मंगवाया है । (पार्वती से) सुनते हो ! तुम्हारा हुआ ?

पार्वती : हुआ । खाना बाहर निकाला कि नहीं ?

भानु : निकालने का क्या ? बटन दबाते ही खाना बाहर आ जायेगा । कहो क्या खाना है ? वही बटन दबाऊंगा ।

पार्वती : ठीक है ! मुझे चावल और मछली चाहिए ।

भानु : हाऽ हाऽ पार्वती, कुछ दिनों के लिए ऐसा खाना भूल जाओ । खाने के लिए है सैंडविच, इडली, दही-चावल, पेस्ट्री और उबला-अंडा । ब्रेड-बटर भी है ।

पार्वती : धुर ! एक भी चीज मेरी पसंद की नहीं है । क्या तुम्हारा अनशन करने का विचार है ?

भानु : अनशन क्यों करूं ? मिठाई में क्या है ? मैसूर पाक, लड्डू एवं रसगुल्ला ।

पार्वती : रसगुल्ला है । थुंबा में भी आजकल कलकत्ता का रसगुल्ला उपलब्ध है ?

भानु : कलकत्ता का रसगुल्ला अब सर्वभारतीय ही नहीं, अंतर्राष्ट्रीय भी है । आपके पुष्पक रथ में रहने के पश्चात् यह अब अंतरजागतिक हो गया है ।

पार्वती : ठीक है । तब तो मैं सैंडविच और रसगुल्ला ही खाऊंगी ।

भानु : तब बटन दबाओ...5 और 7 । (थोड़ी बाद में) क्या हुआ ? खाने का पैकेट क्यों नहीं आया ?

पार्वती : तुम सही बटन दबा रहे हो न ?
(पुष्पक रथ हिलने लगता है ।)
अरे यह क्या हो रहा है ? पुष्पक रथ क्यों कांप रहा है ?

भानु : लेकिन हमारा चश्मा किधर है ?

पार्वती : कितनी बार कहा कि चश्मा संभाल कर रखा करो । यह तो अब अंतरिक्ष में उड़ भी सकता है । मुझे कहते हो कि सब कुछ प्लास्टिक सैक के अंदर करो । और खुद ? घर में भी चश्मा दिन में दो-तीन बार गुम जाता है, फिर यहां तो वह उड़ भी सकता है ।

भानु : ढूंढ़ो तो जरा । चश्मा लगाकर देखना कि बटन ठीक से दबाया है कि नहीं ?

पार्वती : वह देखो तुम्हारा चश्मा पुष्पक रथ के बी-कोण में उड़ रहा है ।

भानु : जाओ आप उड़ते हुए चश्मे को लेकर आओ । मैं इस हालत में कंट्रोल छोड़कर जा नहीं सकता । पहले बटन देखकर फिर ग्राउंड कंट्रोल से सलाह करूंगा ।

पार्वती : लो जी चश्मा ।

भानु : हां, दो । (इधर-उधर देखकर) मैंने गलत बटन दबाया । अभी हाइड्रोजन थ्रस्टर जलना आरंभ हो गया ।

पार्वती : जलने दो । मुझे खाना दो ।

भानु : अभी खाने को छोड़ो । पुष्पक रथ ने अब चांद की तरफ चलना शुरू कर दिया है । इस समय खाना-सोना सब कुछ बंद । ठीक ठाक नहीं हुआ तो चंद्र-यात्रा ऋषि अगस्त्य-यात्रा भी हो सकती है । ग्राउंड कंट्रोल के साथ बातें करने दो ।

पार्वती : बिना चश्मे के बटन क्यों दबाया ?

भानु : अरे छोड़ो भी बटन दबाने की बात । ग्राउंड कंट्रोल नहीं मिल रहा है । सारे लोग सो गये क्या ?

पार्वती : क्यों क्रोध कर रहे हो ? नहीं तो एक दिन

पहले ही चांद पर पहुंचेंगे ।

भानु : एक दिन पहले चांद में नहीं स्वर्ग में पहुचेंगे । भगवान जाने पुष्पक रथ अभी कौन सी दिशा में चल रहा है ।

पार्वती : स्वर्ग क्यों ? हाय ! तुम्हारी बातों में आकर चांद की ओर हाथ बढ़ाया । हमारे भाग्य में ऐसा ही था - ऋषि अगस्त्य-यात्रा ! (रोना आरंभ) ।

भानु : ओफ् ! रोती क्यों ? स्त्री लोगों के साथ यही तो झमेला है - ये सुख में रोयेंगी दुख में रोयेंगी या तो बिना कारण रोयेंगी । अभी रोने का क्या कारण है ?

पार्वती : तुम्हीं ने तो कहा कि स्वर्ग में जाना पड़ेगा ।

भानु : अरे धुत ! वह तो बाद की बात है । डरो मत । अगर ग्राउंड कंट्रोल नहीं मिला तो मैं खुद पुष्पक का कंट्रोल ले लूंगा ।

पार्वती : इसका अर्थ है हमारी जान भी तुम्हारे हाथ में है । किंतु तुम सचमुच पृथ्वी पर वापस लौट सकोगे न ?

भानु : सकोगे क्या मतलब । देखती नहीं पुष्पक रथ का हिलना बंद हो गया ।

पार्वती : सो तो देख रही हूं । लेकिन पृथ्वी लौटने में और कितनी देर है । पोता सतानु का अन्नप्रासन अभी नहीं देखा । यदि सचमुच स्वर्ग जाना पड़ा तो ?

भानु : अरे क्या बात करती हो ? सतानु का अन्नप्रासन क्या, शादी भी देख सकोगी । और सताओ मत । हम लोग अभी आउटर स्पेस अर्थात महाकाश में स्थित हैं । अब लगभग मंगल ग्रह का कक्ष-पथ पार कर रहा हूं ।

पार्वती : क्या कहते हो ? मंगल तो चांद से भी बहुत दूर है ।

भानु : (स्वगत) हे मंगलमय ! पार्वती थोड़ा विज्ञान भी जानती है । पार्वती को पता है कि मंगल चांद से दूर है ।

पार्वती : क्या बड़बड़ा रहे हो ?

भानु : नहीं नहीं ! कुछ नहीं ! कहता हूं कि इसके बाद आयेगा बृहस्पति । कुछ दिन पहले शुमेकार-लेवी धूमकेतु ने बृहस्पति से टकराकर उसे अस्त-व्यस्त कर दिया था । मुंबई का आकाश तब बादलों से भरा था । इसलिए वह दृश्य मैं देख नहीं पाया था । अब बृहस्पति की स्थिति भी थोड़ा देख लूंगा ।

पार्वती : बृहस्पति में क्या हुआ यह देखकर हम पृथ्वीवासियों को क्या लाभ होगा । तुम अब जल्दी पृथ्वी वापस चलो ।

भानु : अरे धुत ! मेरी भी इच्छा नहीं है । फिर यदि रास्ते में पड़ रहा है तो देखने में क्या हर्ज है ?

पार्वती : सच बताओ तुम मुझे कहां ले जा रहे हो ?

भानु : पार्वती, चुप हो जाओ । अभी हम लोग मंगल और बृहस्पति के बीच में स्थित हैं । यहां बहुत सारे एस्टेरॉयड्स घूमते फिरते रहते हैं । इससे बचकर चलना पड़ेगा । नहीं तो कोलिज़न होगा ।

पार्वती : किसके साथ कोलिज़न होगा ? सुना था रेलगाड़ी में कोलिज़न होता है । यहां भी कोलिजन होगा ? बोलो एस्टेरॉयड क्या कोई गाड़ी है ?

भानु : धुर ! तुम्हें कुछ नहीं मालूम है । एस्टेरॉयड का मतलब है ग्रहाणुपुंज । देखो देखो ! पुष्पक रथ के सामने अभी सबसे बड़ा एस्टेरॉयड "सेरेस" । इससे तो बच गये । अभी थोड़ा चुप रहो ।

पार्वती : लेकिन अभी तक बताया नहीं कहां जा रहे हो ?

भानु : पार्वती बाहर की ओर देखो । हम लोग अभी बृहस्पति के पास हैं । आहा ! शुमेकार-लैवी धुमकेतु ने बृहस्पति का क्या हाल कर दिया । और थोड़ी दूर क्या दिख रहा है ?

पार्वती : देख रही हूं एक बहुत बड़ी मणि जिसके कान में एक बहुत बड़ी बाली भी है ।

भानु : वह बाली नहीं । वह शनि ग्रह का वलय है । कितनी बार कहा रतन की पाठशाला की विज्ञान पुस्तक थोड़ा पढ़ लो ।

पार्वती : छोड़ो भी तुम्हारी विज्ञान पुस्तक । कितनी सुंदर बाली है । सुनो मुंबई लौटकर मुझे शनि के वलय जैसी डिजाइन वाली बाली खरीदकर देना ।

भानु : फिर वही बात । तुम अपनी उमर का तो ख़्याल करो ! अब ऐसी बाली पहनेगी तुम्हारी बहू - तुम नहीं ।

पार्वती : ठीक है बहू ही पहनेगी । लेकिन अब जल्दी वापस चलो ।

भानु : नहीं ! शनि पर कुछ किये बिना नहीं लौटेंगे । ज्योतिषी महाशय ने मुझसे कहा था कि मेरी कुंडली के अष्टम गृह में शनि स्थित है, अर्थात् हमारी अभी शनि की दशा चल रही है । इसी कारण मेरा टिस्को शेयर का दाम लुढ़क गया ।

पार्वती : टिस्को शेयर तो बहुत लोगों के पास है । क्या सबकी शनि की दशा चल रही है ?

भानु : लगता है अभी टिस्को कंपनी की शनि की दशा चल रही है ।

पार्वती : लेकिन तुम शनि के पास जाकर क्या करोगे ?

भानु : क्या कहती हो ? शनि के पास जाकर पुष्पक रथ के एन्टीना से धक्का देकर शनि को हटा दूंगा । बस हमारी भी शनि की दशा ख़तम । इसके बाद शेयर बेचकर लखपति बन जायेंगे ।

पार्वती : तब ऐसी एक कान की बाली खरीदोगे न ।

भानु : फिर शुरु किया । ठीक है बाबा खरीदूंगा । अब तो थोड़ा चुप हो जाओ ।

क्या बात है ? बत्ती क्यों बुझा दी ?

पार्वती : पार्वती ! इमरजेन्सी हो गयी है । पुष्पक रथ

भानु : का पॉवर फेल्योर हुआ । . . .मैं कुछ कर नहीं पा रहा हूं । लगता है अब तो स्वर्ग वासी होना पड़ेगा । (उच्च स्वर में) पार्वती, पार्वती !!

क्या बात है ? सपना देख रहे थे ? इस उमर

पार्वती : में हमारा नाम लेकर इतनी जोर से पुकार रहे हो । शरम की बात है । बाजू के कमरे में बहू-बेटे सो रहे हैं । क्या सपना देख रहे थे ?

(जगकर) हूं ! हूं !! सपना, बहुत बुरा

भानु : सपना !

शिव शिव बोलो । सुबह-सुबह बुरा मत

पार्वती : बोलो ।

रिटायरमेंट के रुपये से टिस्को का शेयर

भानु : खरीदा था न, लगता है वही सब डूबेगा । सुबह-सुबह ऐसा बोलना नहीं चाहिए । फिर

पार्वती : भी बोलती हूं डूबने दो । उस रुपये से मुझे कुछ लेना देना नहीं । बेटा अच्छा नौकरी करता है । बेटा, बहू और सतानु को लेकर हमारा बहुत अच्छा गुजारा चल रहा है । सुना, मंदिर में भजन शुरु हो गया है । मैं मंदिर जा रही हूं । तुम भी आ जाओ । (चली जाती है) ।

(भजन की आवाज धीरे-धीरे बढ़ती जाती ।)

❐❐❐

विज्ञान कथा

# कौन मयूर है सबसे हल्का ?

बात है लगभग 2050 वर्ष पूर्व की । उस समय विक्रमादित्य भारत के चक्रवर्ती सम्राट थे । उन्हीं के नाम से विक्रमी संवत् का प्रचलन प्रारंभ हुआ है । उनके दरबार में नौ अलग-अलग विषयों के विद्वान नौरत्न के रूप में प्रतिष्ठित थे । उनकी प्रसिद्धि देश-विदेश तक फैली हुई थी । उन्हीं के दरबार में घटी एक घटना की बात की जा रही है ।

एक बार की बात है । एक मित्र राजा ने भारत सम्राट विक्रमादित्य को सुंदर-सुनहरे नौ स्वर्ण मयूर उपहार स्वरूप भेंट किये । साथ ही उसने एक संदेश भी भिजवाया कि उन नौ स्वर्ण मयूरों में एक अन्य आठों से कुछ हल्का है, जबकि शेष आठ बिल्कुल बराबर तौल के हैं । उस राजा ने एक शर्त और भी जोड़ रखी थी । अपने प्रेषित संदेश में कि केवल दो बार तौल कर ही सबसे हल्के मयूर का पता लगाने पर 100 स्वर्ण मुद्राएं अलग से पुरस्कार स्वरूप उसकी ओर से दी जा. ंगी । यह पुरस्कार राशि उसका संदेश वाहक तत्काल ही हल्के मयूर का पता लगाने वाले को सौंप देगा ।

विक्रमादित्य इस संदेश को चुनौती के रूप में स्वीकारते ही चिंतित हो गये । उन्हें यह भय भी सताने लगा कि इस घटना के सहारे वह चालाक राजा भारत के विद्वानों की क्षमता को तौलना चाहता है । इस चुनौतीपूर्ण स्थिति का सामना करने के लिए सम्राट ने अपने बुद्धिमान नौरत्नों से इस समस्या का शर्त अनुसार समाधान बताने को कहा । लेकिन नौरत्नों में से किसी ने तत्काल समाधान नहीं किया । सम्राट की चिंता और बढ़ गयी । रात में सम्राट ने इस समस्या को अपनी रानी के समक्ष रखा । रानी ने सलाह दी कि इस समस्या को खुले तौर पर अपने सहयोगियों, दरबारियों एवं कार्मिकों के बीच रख, पुरस्कार राशि उस प्रतिभावान व्यक्ति को देने की घोषणा करें जो इस समस्या का समाधान शर्त अनुसार ढूंढ़ेगा ।

अगले दिन सम्राट ने इस समस्या को अपने आम दरबार में रखा और समाधान ढूंढ़ने के लिए प्रेरित किया । दूसरे दिन एक दरबारी बारीकी से तौलने वाली एक तराजू लेकर दरबार में आया और शर्त अनुसार समस्या के समाधान का प्रदर्शन उसने किया ।

उस दरबारी ने नौ मयूरों में से छः मयूरों को लेकर तराजू के दोनों पलड़ों पर तीन-तीन रखकर रखा और देखा कि तौल में दोनों पलड़े बराबर हैं । इससे वह समझ गया कि इन छः में सबसे हल्का मयूर मौजूद नहीं है । दूसरी बार शेष तीन में से दो लेकर प्रत्येक पलड़े पर एक-एक रखकर उसने तौला और पाया कि एक पलड़ा ऊपर उठ गया । बस फिर क्या था, उसने बता दिया कि ऊपर उठने वाले पलड़े पर रखा मयूर ही सबसे हल्का मयूर है । सम्राट ने तत्काल ही उसे सौ स्वर्ण मुद्राएं पुरस्कार स्वरूप भेंट कीं ।

भारत सम्राट बहुत खुश हुए कि सौभाग्यवश सबसे हल्का मयूर उसी बचे हुए तीन में था और फिर उस दो में जिसको दूसरी बार तौला गया । लेकिन कुछ देर के बाद फिर से चिंता सताने लगी कि यदि सबसे हल्का मयूर प्रथम छः के किसी तीन वाले समूह में मौजूद होता, तो क्या होता ? और इसी तरह यह भी कि यदि दूसरी बार तौलने पर यदि दोनों पलड़े बराबर रहते, तो क्या होता ?

सम्राट ने इन बातों को जानने के लिए उस दरबारी को अकेले में बुलाकर अपनी मंशा उसके सामने रखी । वह बुद्धिमान दरबारी सम्राट का प्रश्न समझ चुका था । उसने ससम्मान सम्राट की जिज्ञासा शांत करते हुए बताया कि यदि दूसरी बार के तौल में दोनों पलड़े बराबर पाये जाते तो अंतिम शेष एक मयूर जो बचा था, वही सबसे हल्का मयूर होता । यह भी कि यदि पहली बार के तौल में जिस तीन मयूर वाले पलड़े ऊपर उठते, उन्हीं तीन में से किसी दो को दूसरी बार तौलते और ज्ञात कर लिया जाता कि सबसे हल्का मयूर कौन है ?

वह बुद्धिमान दरबारी दूसरे दिन सम्राट की जिज्ञासा शांत करने के ध्येय से नौ सिक्के लाया जिसमें एक खोटा और हल्का था । उन नौ सिक्कों में से केवल दो बार

तौलकर खोटे सिक्के का पता लगाने के लिए अलग-अलग तरीके से तौलकर सम्राट के समक्ष प्रदर्शन किया और खोटा सिक्का ढूंढ़ निकाला। खोटे सिक्के ढूंढ़ने के लिए उस दरबारी द्वारा प्रदर्शित प्रयोग से सम्राट विक्रमादित्य अत्यंत प्रसन्न हुए। उन्होंने अपने राजकोष से भी 100 स्वर्ण मुद्राओं की पुरस्कार राशि भेंट की।

प्रस्तुति : **गोविंद प्रसाद शर्मा**
13/1, श्रेणी चार निर्माण नगर, लखनऊ - 226 012

## विज्ञान कविता

# परमाणु

धरती स्थित जड़-जंगम सब के मूल वस्तु हैं बयानबे,
जिनके परस्पर अभिक्रिया से जग में हैं अगणित वस्तु बने ।।

मूल वस्तु को विभाजन कर-कर सूक्ष्मतम कण है परमाणु,
मूल है वस्तु-विशिष्ट गुणों का उसकी रचना है, जानूं ।।

परमाणु का व्यास करीबन एक ऑंग्स्ट्रम ही होता है,
जो मीटर का लाखवांश का लाखवांश ही होता है ।।

परमाणु के अंदर है न्यूक्लियस, जिसमें हैं प्रोटॉन और न्यूट्रॉन,
परिक्रमा जिसकी करते हैं, प्रोटॉन-संख्या सम इलेक्ट्रॉन ।।

परमाण्विक संहति की इकाई ए. एम. यू. कहलाती है,
जो किलोग्राम का छठवाँ भाग का खरब पदमवांश होती है ।

प्रोट्रॉन संहति है एक ए. एम. यू., इकाई धनावेश भरा,
इलेक्ट्रॉन संहति है नगण्य, उसमें है इकाई ऋणावेश भरा ।।

संहति एक ए. एम. यू. है जिसका, शून्यावेश कण है न्यूट्रॉन,
परमाण्विक प्रक्रियाओं में वह लेता है भूमिका महान ।।

न्यूक्लियस के प्रोट्रॉन-संख्या से मूल वस्तु परिचय होगा,
कक्षा के इलेक्ट्रॉन संख्या से उसका रसायन गुण होगा ।।

न्यूक्लियस में हो एक ही प्रोटॉन, वह परमाणु है हाइड्रोजन,
दो प्रोट्रॉनवाला है हीलियम, लीथियम में हैं तीन प्रोट्रॉन ।।

बेरिलियम परमाणु में चार प्रोटॉन, पांच हो तो वह है बोरॉन,
छः हो तो कार्बन, सात-नाइट्रोजन, आठ प्रोटॉन हो तो ऑक्सीजन ।।

फ्लोरीन परमाणु में नौ प्रोटॉन, दस प्रोटॉन हैं नियान में,
सोडियम में ग्यारह, मैग्नेशियम में बारह, तेरह हैं अल्युमिनियम में ।।

चौदह प्रोटॉन हैं सिलिकॉन में, फॉस्फोरस में पंद्रह प्रोट्रॉन,
सल्फर में सोलह, क्लोरीन में सत्रह, आर्गान में अठ रह प्रोटॉन ।।

उन्नीस प्रोटॉन पोटेसियम में, केल्सियम परमाणु में हैं बीस,
स्कैंडियम - इक्कीस, टाइटानियम - बाईस, वेनेडियम में प्रोटॉन तेईस ।।

ऐसे प्रोटॉन संख्यानुक्रम से हैं बहु-विश्व वस्तु बने,
बयानबे को यूरेनियम अंतिम जो नैसर्गिक हैं बने ।।

न्यूट्रॉन संख्या बदलने से बनते हैं परमाणु के आइसोटोप,
जिनके भौतिक गुण हैं अलग ही, पर हैं रसायन में सारूप ।।

- **अनंत भट**, ध्रुव रिएक्टर, भा. प. अ. केंद्र, मुंबई 400 085

## टिप्पणियां

### 1. प्रदूषण रोकने में कारगर गैस प्लाज्मा

दुनिया के वैज्ञानिकों के समक्ष एक गंभीर प्रश्न यह है कि पर्यावरण को कैसे शुद्ध रखा जाय ? प्लाज्माशास्त्रियों ने गैस प्लाज्मा पर आधारित एक ऐसा तरीका प्रस्तुत किया है जो ठोस कचड़े से उत्पन्न प्रदूषण को रोकने में अत्यंत कारगर, औद्योगिक दृष्टि से काफी उन्नत तथा अपेक्षाकृत कम खर्चीला है । इसके अलावा कचड़े के उपचारोपरांत प्राप्त प्रतिफल भी अत्यंत उपयोगी हैं ।

पदार्थ की तीन अवस्थाएं होती हैं : ठोस, द्रव और गैस । गैस का तापक्रम अगर लगातार बढ़ाया जाय तो यह आयनीकृत हो जाता है और हमें इलेक्ट्रॉन (ऋण आवेशित), ऑयन (धन आवेशित) और न्यूट्रल्स (आवेशरहित) मिलते हैं । इन घटकों का समूह प्लाज्मा कहलाता है । प्लाज्मा विद्युत का सुचालक होता है । ध्यान रहे, साधारण गैस विद्युत कुचालक होता है तथा पूर्णतः विद्युत आवेश उदासीन होता है जबकि प्लाज्मा प्रायः आवेश उदासीन होता है । दूसरे शब्दों में प्लाज्मा आवेश उदासीनता की स्थिति को प्राप्त करने की ओर सदैव अग्रसर रहता है ।

कचड़े के उपचार की विधि को वैज्ञानिकों ने एक पॉयलेट प्रॉजेक्ट की मदद से प्रदर्शित किया है । गैस प्लाज्मा एक विशेष यंत्र, प्लाज्मा टॉर्च, से प्राप्त किया जाता है ।

यंत्र में ग्रेफाइट धातु के दो इलेक्ट्रोड होते हैं । एक इलेक्ट्रोड कैथोड का काम करता है और दूसरा एनोड का । डी. सी. (डाईरेक्ट करेंट) पावर-सप्लाई की मदद से दोनो इलेक्ट्रोड के बीच एक जलती आर्क स्थापित की जाती है, (चित्र-1) । जलती आर्क में बाहर से नाइट्रोजन गैस प्रवाहित कर एक उच्च तापक्रम (10,000 डिग्री केल्विन) का प्लाज्मा प्राप्त किया जाता है । पटना विश्वविद्यालय के भौतिकी विभाग में स्थापित प्लाज्मा लैब में बिना बाहरी गैस की मदद के 5,000 डिग्री केल्विन तापक्रम की प्लाज्मा आर्क देखी जा

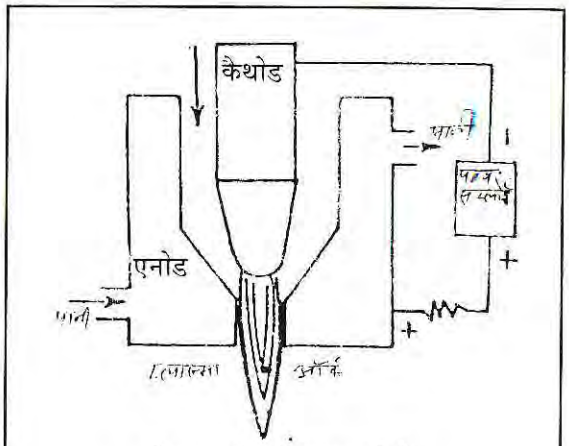

चित्र - 1 : प्लाज्मा टॉर्च

सकती है । प्लाज्मा टॉर्च के नॉजल (संकीर्ण निकास) के आकार के एनोड से एक पतली पुंज में प्लाज्मा तेज रफ़्तार से बाहर निकलता है । आखिर, कचड़ा का उपचार प्लाज्मा की मदद से कैसे और क्यों होता है ? इसे इस प्रकार समझा जा सकता है । प्लाज्मा के विभिन्न अवयव जैसे इलेक्ट्रॉन, ऑयन एवं स्वतंत्र रेडिकल्स रियक्टिव स्पीसीस (प्रतिक्रियाशील पदार्थ) का काम करते हैं । इनके संगत तापक्रम (गतिज) भिन्न-भिन्न होते हैं । कचड़े के घटक पदार्थ (मिट्टी / धातु, ज्वलनशील चीजें एवं स्लज) प्लाज्मा में निहित संगत रियक्टिव स्पीसीज से प्रतिक्रिया करते हैं और वे रुपांतरित हो जाते हैं । रुपांतरण कई चैनलों (स्पीसीज के भिन्न-भिन्न तापक्रम के कारण) में होता है । फलस्वरूप प्रतिक्रिया की दर काफी बढ़ी हुई होती है । इन सारी बातों के पीछे सबसे महत्वपूर्ण तथ्य है कि प्लाज्मा के उच्च तापक्रम के कारण लिया गया बिना जले कचड़ा बिना जले अंतिम रुप, लावा (तरल) जैसे ग्लास में परिणत हो जाता है । यह ध्यान देने की बात है कि किसी वस्तु के जलने की क्रिया 700-800 डिग्री केल्वीन तापक्रम के आस-पास होती है जबकि यहां प्लाज्मा 10,000 डिग्री केल्विन तापक्रम पर है । इस प्रकार इस क्रिया में कचड़े को जलने का मौका ही नहीं मिलता है और यह सीधे अंतिम रुप में बदल जाता है । साथ ही काफी उच्च तापक्रम रहने के कारण प्रतिक्रिया काफी तेज भी होती है ।

इस विधि के दो लाभ हैं । पहला कि इसमें हानिकारक पदार्थ टॉक्सीन ऐश या डॉक्सीन नहीं मिलता है, जिससे प्रदूषण में अतिरिक्त कमी आती है । दूसरा लाभ है कि कचड़ा का नया रूप, लावा (तरल रूप) जैसा ग्लास सड़क निर्माण में उपयोग है । यही नहीं, चूंकि मुख्य यंत्र प्लाज्मा टॉर्च, विद्युत द्वारा चलाया जाता है, इसके परिचालन से वायुमंडल को प्रदूषित करने वाली कोई गैस नहीं निकलती है । तेलचालित इन्सीनरेटर (कचड़ा उपचार में अपनाया गया सामान्य यंत्र) से हानिकारक गैस निकलती है ।

कचड़ा उपचार की यह नयी तकनीक आर्थिक दृष्टि से भी उपयुक्त है । गणना के मुताबिक एक किलोग्राम कचड़े का उपचार मात्र 8 रुपए की लागत पर संभव है जो आम विधि में आयी लागत के लगभग बराबर है ।

इन्स्टीट्यूट ऑफ प्लाज्मा रिसर्च, भाट, गांधीनगर (गुजरात) एक ऐसी राष्ट्रीय संस्था है जो प्लाज्मा के उपयोग के औद्योगिक एवं वैज्ञानिक पहलुओं के अध्ययन एवं शोध में कार्यरत है । वर्णित तकनीक की अद्यतन जानकारी इस संस्था से प्राप्त की जा सकती है ।

**डॉ. विजयेंद्र नारायण**

द्वारा प्रो. राजमणि प्रसाद सिन्हा

भौतिक विभाग, पटना विश्वविद्यालय,

पटना-800 004.

## 2. नीम : आधुनिक कीटनाशकों का सर्वोत्तम विकल्प

जिन दिनों दुनिया भर में लोग कीटनाशकों को अपनाने की होड़ लगाये हुए थे उन्हीं दिनों अमरीका का एक वैज्ञानिक राबर्ट लार्सन हिंदुस्तान के गांवों में घूम-घूम कर कीटनाशकों का विकल्प ढूंढ़ रहा था । यहां ग्रामीणों द्वारा 'नीम' व उसके कीटनाशक गुणों का उपयोग देख कर लार्सन आश्चर्यचकित हो गया । वह यहां से नीम की निबौलियों (फल) को अमरीका ले गया । वहां उसने संयुक्त राज्य विकास एजेंसी के साथ मिलकर निबौलियों से एक फार्मुलेशन (मार्गोसन-ओ) तैयार किया । संयुक्त राज्य अमरीका की पर्यावरण सुरक्षा एजेंसी ने शीघ्र ही मार्गोसन-ओ को मान्यता दे दी । यह वह पहली घटना थी जिसके कारण नीम पहली बार दुनिया भर में चर्चा के केंद्र में आ गया ।

जिस नीम के कीटनाशक गुण को अमरीका वाले बीसवीं सदी में जान पाये उसे हमारे देश के लोग न केवल हजारों साल पहले से जानते हैं, वरन् उसका उपयोग भी कर रहे हैं । लेकिन दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति यह है कि हमारी सरकार व वैज्ञानिक संस्थानों को इसकी महत्ता का आभास तब हुआ जब विदेशियों में नीम के प्रति दिलचस्पी बढ़ी । एक से बढ़कर एक शक्तिशाली कीटनाशकों की खोज ने आज दुनिया को भयावह प्रदूषण की चपेट में ला दिया है । इसके बावजूद जिन कीड़े-मकोड़ों को नष्ट करने के लिए ये कीटनाशक बनाये गये वे अपने अंदर प्रतिरोधक क्षमता विकसित करके आज और भी शक्तिशाली शत्रु के रूप में दुनिया के समाने खड़े हैं । इस भयंकर हताशा में आज आशा की केवल एक किरण दिखायी दे रही है । वह है "नीम"।

नीम का इतिहास उतना ही पुराना है जितनी पुरानी हमारी सभ्यता है । पुरातत्त्व अन्वेषकों को मोहन-जो-दड़ो की खुदाई में मिले कुछ ताबीजों में नीम वृक्ष की आकृति बनी मिली है । भारतीय चिकित्सा के प्राचीनतम शास्त्रों - चरक, सुश्रुत में भी इस वृक्ष के गुणों का वर्णन है । इस प्रकार नीम हमारे देश में प्राचीन काल से ही लोकप्रिय वृक्ष रहा है ।

इस पेड़ को आयुर्वेद में "सर्व रोग निवारणी" कहा गया है । इसकी छाल का काढ़ा बुखार, गठिया आदि में दिया जाता है । इसका तेल टिटनेस, कोढ़ की प्रारंभिक अवस्था, एक्जिमा, पित्ती, गलसुआ, अपचन और दाद वगैरह में काम आता है । नीम की पत्तियों का रस पीलिया और त्वचा संबंधी बीमारियां ठीक करने में काम आता है और इससे कीटों को भगाने का काम भी लिया जाता है । नीम की मुलायम शाखाएं ग्रामीण इलाकों में दांतों को स्वस्थ रखने व दांतून करने के काम आती हैं । रेशमी व गर्म कपड़ों की तहों के बीच नीम की पत्तियां रखने से उनमें कीड़े नहीं लगते । कृत्रिम कीटनाशकों के अस्तित्व के पहले नीम की निबौलियों का गीला सत फसलों पर छिड़क कर कीटों को भगाया जाता था ।

पिछले चार दशकों से अखाद्य नीम तेल से खादी व ग्रामोद्योग परिषद साबुन बनाने को प्रोत्साहन देती आ रही है। नीम के तेल की दक्षिण भारत के औद्योगिक क्षेत्रों में भारी मांग है। तेल निकालने के बाद बची हुई खली की खाद के रुप में भारी मांग है क्योंकि यह जड़ों में लगने वाले कृमियों को मार डालती है और छोटे मोटे कीटों के आक्रमण कम करती है।

नीम पर आधुनिक वैज्ञानिक अध्ययन की शुरुआत भी यद्यपि भारत से ही शुरु हुई लेकिन बाद में इसमें रुचि कम होती गयी।

सबसे पहले 1942 में भारत की केंद्रीय वैज्ञानिक और औद्योगिक परिषद के विज्ञानी श्री सिद्दीकी ने नीम के तेल, टहनियों, जड़ों व छाल से एक रासायनिक घटक निंबिन प्राप्त किया। पर इस काम के बाद नीम के रासायनिक घटकों में रुचि कमोबेश मामूली ही रही। इसके बाद नारायणन व उनके सहयोगियों ने नीम से दो रासायनिक पदार्थ विलासिनिन एवं वेपेनिन को प्राप्त किया।

60 के दशक में भारत में कुछ शोध पत्रों में छपा कि नीम की निबौलियों का सत रेगिस्तानी व घुमंतू टिड्डियों के लिए नाशकारक है। इसी बीच नीम की निबौलियों से सूक्ष्म रवेदार यौगिक, एजाडाइरेक्टिन अलग किया गया। इस यौगिक में कीड़े मकोड़ों को नष्ट करने के आश्चर्यजनक गुण पाये गये। विस्तृत परीक्षणों में देखा गया कि एजाडाइरेक्टिन, 10-100 अंश प्रति दस लाख की सांद्रता पर 200 से भी अधिक प्रजातियों के कीटों में भोजन बनाने की प्रक्रिया को रोक देता है। इससे भी ज्यादा रोचक यह तथ्य है कि एजाडाइरेक्टिन की बहुत सूक्ष्म मात्रा (1 से 10 अंश प्रति दस लाख) कीटों के केंचुली निकालने की प्रक्रिया रोक देती है। इससे कीटों के लार्वा का पूर्ण वयस्क में बदलना रुक जाता है और उनकी आगे की संभावित पीढ़ियों का अस्तित्व खत्म हो जाता है। अब शुद्ध एजाडाइरेक्टिन निकालने की नयी विधि विकसित कर ली गयी है।

एजाडाइरेक्टिन की खोज और उसके उल्लेखनीय जैविक क्रिया कलापों ने नीम के रासायनिक परीक्षणों पर नये सिरे से रुचि जागृत कर दी। 1978 में कोलंबिया विश्वविद्यालय के वैज्ञानिक क्यूबो तथा काकानिशी ने निबौली से "अर्जदरेक्टी" नामक एक और यौगिक अलग किया। यह यौगिक अफ्रीका की टिड्डी "शिस्टोसर्का गेगेरिया" के शत प्रतिशत रोकथाम में सक्षम पाया गया।

इसी प्रकार एक अन्य वर्मीसाइड "पेलियान्ट्रियाल" भी पृथक किया गया है। आधुनिकतम जानकारियों के अनुसार नीम की पत्तियों से निकाले गये कीटनाशकों से 300 किस्मों की कीट प्रजातियों को नियंत्रित किया जा सकता है। यही नहीं नीम उत्पादों से करीब एक दर्जन किस्म के हानिकारक सूत्र कृमियों एवं कुछ फफूंदियों को भी नियंत्रित किया जा सकता है। केवल भारत में ही 110 से अधिक ऐसी कीट प्रजातियां हैं जिनका नियंत्रण नीम से किया जा सकता है।

नीम पर नये अनुसंधान के मामले में हमारे देश के वैज्ञानिक किसी से पीछे नहीं हैं। भारतीय वैज्ञानिकों को एक महत्वपूर्ण सफलता नीम से गर्भनिरोधक बनाने में मिली है। इस गर्भनिरोधक की खोज का ध्यान भी वैज्ञानिकों को इसके कीटनाशक गुणों को देखकर ही हुआ। शुक्राणुओं पर नीम तेल का असर देखा गया तो पाया गया कि इससे शुक्राणु नष्ट हो जाते हैं। बस, वैज्ञानिक इससे सुरक्षित गर्भनिरोधक बनाने में जुट गये। भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान तथा रक्षा वैज्ञानिकों के संयुक्त दल ने आख़िरकार ऐसा एक सुरक्षित गर्भनिरोधक खोज ही लिया। हैदराबाद की एक फर्म को इसके व्यापारिक उत्पादन की अनुमति भी दे दी गयी है। पेसरी या क्रीम के रूप में उपयोग किये जाने वाले इस गर्भनिरोधक के शीघ्र ही भारतीय बाजारों में आने की उम्मीद है। इतना ही नहीं वैज्ञानिकों का तो यहां तक कहना है कि अब वह दिन बहुत दूर नहीं जब आधुनिक युग में आतंक के पर्याय बने "एड्स" और "कैंसर" जैसे रोगों के लिए नीम से ही रामबाण औषधियां तैयार की जा सकेंगी।

आजकल पश्चिम के वैज्ञानिक भारतीय जड़ी बूटियों पर धड़ाधड़ पेटेंट ले रहे हैं। इस मामले में नीम पर सर्वाधिक पेटेंट लिये गये हैं। अब तक नीम के

अमरीका 54, जापान 59, इंग्लैंड 6 तथा भारत 36 उत्पाद व प्रक्रिया पेटेंट ले चुका है । इसके बावजूद दुनिया के अनेक देशों में नीम पर अनुसंधान जारी हैं । इसके गुणों को देखते हुए ही आस्ट्रेलिया, अफ्रीका, फिजी, मारीशस, मध्य और दक्षिण अफ्रीका, कैरिबियाई, द्वीप समूह, प्योर्टोरिको, वर्जिन द्वीप समूह तथा हाइती आदि देशों में नीम के वृक्ष बहुतायात से लगाये जा रहे हैं । भारत से नीम के पदार्थों का निर्यात लगातार बढ़ रहा है ।

**विजय चितौरी**
द्वारा ग्रामोदय प्रकाशन,
घूरपुर, इलाहाबाद 212 110

## 3. औषधीय महत्व की अमूल्य वनस्पतियां

प्रकृति द्वारा संसार में पैदा की गयी सभी चीजें किसी न किसी रूप में उपयोगी अवश्य होती हैं । जहां तक पेड़-पौधों की बात है, संसार के असंख्य पौधे किसी न किसी रूप में उपयोगी हैं । आज जब 170 लाख हैक्टेयर वन क्षेत्र प्रति वर्ष की दर से विश्व में समाप्त हो रहे हैं, कई प्रजातियां लुप्त हो चुकी हैं अथवा लुप्त होने के कगार पर हैं । यह विनाशकारी प्रवृत्ति अविरल रूप से जारी है तथा "धरती के विरले पौधे" (रेयर प्लान्टेस ऑफ दी अर्थ) की संख्या में लगातार वृद्धि हो रही है ।

अनियंत्रित दोहन व उपेक्षा से औषधीय पादपों की कई जातियां भी लुप्त हो गयी हैं । दूसरी ओर वनौषधियों की बढ़ती मांग के कारण कई प्रजातियों का अनियंत्रित दोहन जारी है जिससे वे भी लुप्त हो सकती हैं । भारत सहित एशिया की करीब 170, अफ्रीका की 480, आस्ट्रेलिया की 50, उत्तरी अमरीका की 45, यूरोप की 40 तथा प्रशांत महासागरीय द्वीपों में से 39 से अधिक कुलों के पौधे प्रायः लुप्त होने के कगार पर हैं ।

**1) सफेद मूसली** : इसे वानस्पतिक भाषा में "क्लोरोफाइटम ऐरुन्डीनेसियम कहते हैं, और यह "लिलिएसी" कुल का सदस्य है । यह भारत के कई भागों में पाया जाता है तथा साल फोरेस्ट में इसकी अधिकता है । इसकी ज़ड़ों हेतु विदोहन के कारण इसकी संख्या बहुत कम रह गयी है ।

**2) गुग्गुल** : वानस्पतिक भाषा में "कोंमीफेरा मुकुल" के नाम से जाने जाने वाले इस पादप का कुल बरसीरेसी है । वंश कोम्मीफेरा की कई जातियों से गोंद व रेजिन प्राप्त होते हैं, जो कई आयुर्वेदिक औषधियों में प्रयुक्त होते हैं ।

गुग्गुल मूत्र उत्सर्जन संबंधी रोगों, गठिया व फोड़े-फुंसियों को पकाने, घाव को भरने वाले बाहरी मलहमों में प्रयुक्त होता है । इसके अतिरिक्त कक्षों में तथा धार्मिक व अन्य अवसरों पर वातावरण को सुगंधित एवं शुद्ध करने के लिए भी गुग्गुल सुलगाये जाते हैं । इस प्रकार गुग्गुल का उपयोग औषधियों के बनाने, अगरबत्ती, धूप-सामग्री व सुगंधित लेपों में होता है ।

**3) सर्पगंधा** : यह एक बहुवर्षीय शाकीय पौधा है, जो उष्ण कटिबंधीय हिमालय तथा तराई के क्षेत्र में पंजाब से सिक्किम तक पाया जाता है । आसाम में यह 4000 फीट की ऊंचाई तक तथा दक्षिण भारत के प्रायद्वीप में घाटों में पाया जाता है । औद्योगिक स्तर पर इसे उत्तर प्रदेश, बिहार, उड़ीसा, पश्चिम बंगाल, असम, आंध्र प्रदेश, महाराष्ट्र, तमिलनाडू, कर्नाटक व केरल में भी उगाया जाता है ।

यह भारत का एक प्राचीन औषध पादप है, जिसका वर्णन ईसा पूर्व 800 वर्ष के प्राचीन ग्रंथ चरक संहिता में सर्प एवं कीट दंश के उपचार के अंतर्गत किया गया है । सर्पगंधा की जड़ें सुखाकर औषधि के रूप में प्रयोग की जाती हैं । इस वंश की पांच जातियां भारत में मिलती हैं जिसमें से राऊवाल्फिया सर्पन्टिना सबसे महत्वपूर्ण है ।

इसकी जड़ों में 80 प्रकार के ऐल्केलॉयड मिलते हैं, जिसमें से रिसिरपाइन प्रमुख है तथा इसका उपयोग उग्र पागलपन एवं उच्च रक्त दाब के लिए किया जाता है । इस पौधे की जड़ों का सत आंतों के रोग, हैजा व ज्वर में भी उपयोगी है । यह गर्भवती महिलाओं में बच्चा पैदा होने की स्थिति में गर्भाशय में सिकुड़न कम करता है तथा यह एक दर्द निवारक औषधि भी है ।

**4) ईसबगोल** : इसे वानस्पतिक भाषा में "प्लान्टेगो ओवेटा" कहते हैं। यह मुख्यत: भूमध्यसागरीय प्रदेश एवं पश्चिमी एशियाई क्षेत्र (पाकिस्तान में सतलज और सिंध तक विस्तृत) का देशज है जिसे भारत में प्रवर्तित किया गया है। इसे गुजरात, महाराष्ट्र, राजस्थान एवं पंजाब में उगाया जाता है।

इसके सूखे हुए बीजों को ईसबगोल कहते हैं, इसके दाने व भूसी पेचिश व कब्ज में औषधि के रूप में उपयोग किये जाते हैं। खांसी व जुकाम में ईसबगोल के बीजों का काढ़ा दिया जाता है तथा गठिया व ग्रंथियों की सूजन दूर करने के लिए बीजों को पीसकर तैयार की गयी पुल्टिस बांधी जाती है। गुर्दे, मूत्राशय, मूत्र नली विकारों में तथा ज्वर के लक्षण में भी ईसबगोल देशी दवाई के रूप में लिया जाता है।

**5) महुआ** : इसे "मधुका इंडिका" भी कहते हैं। इसकी एक अन्य जाति "मधुका लेटिफोलिया" है। यह पश्चिमी घाट के मानूसनी वनों, कोकण के दक्षिण भारत के कई राज्यों में भी पाया जाता है। इसके फल, खांसी व कंठ के सूजन में प्रयुक्त होते हैं तथा छाल का काढ़ा मसूढ़ों के खून निकलने व नासूर जैसे रोगों की चिकित्सा में उपयोगी है।

**6) बैल्लाडोना** : यह औषध पादप भारत में यूरोप से लाया गया है तथा यूरोप एवं एशिया माइनर का वन्य पादप है। इसे काश्मीर एवं हिमाचल प्रदेश में लगाया गया है। वानस्पतिक भाषा में "एट्रोपा बेलाडोना" के नाम से जाने जाने वाले इस पौधे की शुष्क पत्तियां औषध महत्व की होती हैं। यह एक विष पादप है।

इससे बनी औषधियां अनुकंपनीय तंत्रिका तंत्र के उत्तेजक के रूप में, मूत्रल के रूप में, नेत्र की पुतली को प्रसारित करने में एवं पार्ल्सी रोग के उपचार में लाभकारी हैं। पेशियों की वेदना को कम करने व फोड़े-फुन्सियों को पकाकर घाव भरने में उसका बाहरी रूप में उपयोग किया जाता है।

**7) अफीम** : इसे वानस्पतिक भाषा में "पेपेवर सोमनीफेरम" कहते हैं। यह चीन, पश्चिम एशिया व भूमध्यसागरीय प्रदेशों में उगाया जाता है। इसकी नियंत्रित खेती उत्तर प्रदेश, बिहार, पूर्वी पंजाब, मध्यप्रदेश एवं राजस्थान में होती है।

औषधीय अफीम पैपेवर सोमनिफेरम किस्म ग्लेब्रा से प्राप्त होती है। इसका उपयोग वेदना शामक एवं निद्रा को प्रेरित करने में होता है। इसमें लगभग 30 ऐल्केलॉयड होते हैं जिसमें से मॉरफीन, कोडीन, नारकोटीन व पैपेवरीन औषधीय रूप से महत्वपूर्ण है। मॉरफीन का उपयोग खांसी के उपचार में किया जाता है।

**8) अश्वगंधा** : इसका वानस्पतिक नाम "विथोनिया सोमनीफेरा" है। इसकी उत्पत्ति नागौ (राजस्थान) से हुई मानी जाती है तथा यह गढ़वाल, कुमांयू के इलाकों तथा पंजाब में भी पाया जाता है। इसकी जड़ों का हिचकी, नारी विकारों, खांसी, आमवात, जलशोध आदि रोगों में तथा जराजन्य दुर्बलता के शामक के रूप में उपयोग किया जाता है। इसकी पत्तियां ज्वर में दी जाती हैं तथा पीड़ामय सूत्रों व दुखती आंखों पर भी लगायी जाती हैं। इसमें "विथेफेरिन ए" नामक ऐल्कोलॉयड औषधीय महत्व का है।

**9) घृतकुमारी** : इसे वानस्पतिक भाषा में "ऐलोय वेरा" कहा जाता है। इसका मूल स्थान उत्तरी अफ्रीका, केनेरी द्वीप समूह व स्पेन है। वर्तमान में यह ईस्ट और वेस्ट इंडीज, भारत, चीन तथा अन्य देशों में भी मिलता है। ऐलोय को क्षुधावर्धक, रेचक तथा आंतवर्जनक के रूप में प्रयोग किया जाता है। ऐलोय की पत्तियों में यह गुण उसमें उपस्थित ग्लाइकोसाइड एलोइन के कारण होता है।

इसकी पत्तियां लिवर को उत्तेजित करने में, नेत्र रोगों में, पीलिया व जोड़ों के दर्द में, यकृत व तिल्ली के बढ़ने पर तथा अपचन, कब्ज व पेट में वायु जमा होने पर औषधीय रूप में प्रयुक्त की जाती हैं।

**10) फोग** : "केलिगोनम पालीगोनाइडिस" वानस्पतिक नाम की यह झाड़ी / छोटा वृक्ष उत्तरी अमरीका, पश्चिमी एशिया व दक्षिणी यूरोप में पायी जाती है। भारत में यह उत्तरी पंजाब एवं राजस्थान में अधिक मिलता है। इसके पुष्पों का प्रयोग आग से जलने पर दवा के रूप में किया जाता है। इसकी पत्तियों का जूस (आक के

लेटेक्स) विष के प्रतिरोध के रूप में प्रयुक्त होता है तथा जड़ों का सत्व कत्थे के साथ मिलाकर गले की खराश में प्रयुक्त होता है ।

**11) ब्राह्मी** : इसे वानस्पतिक भाषा में "बेकोपा मोनेराई" कहते हैं । इसकी 20 से अधिक प्रजातियां झाड़ियों के रूप में विश्व के गर्म प्रदेशों में मिलती हैं, जिसमें से 3 प्रजातियां भारत में भी मिलती हैं । इसके संपूर्ण पादप भागों का उपयोग स्थानीय औषधियां बनाने में किया जाता है । इसे मुख्यत: तंत्रिकीय औषधि के रूप में तथा मिर्गी उन्माद (पागलपन) के उपचार में प्रयुक्त किया जाता है । इसकी सूखी पत्तियों को अस्थमा, तंत्रिकीय अवयान व अन्य रोगों के अतिरिक्त "कार्डियो टॉनिक" के रूप में उपयोगी पाया गया है ।

**12) दूधी** : इसे वानस्पतिक भाषा में "यूफार्बिया हिरता" कहते हैं । यह एकवर्षी पादप भारत के गर्म प्रदेशों में पाया जाता है । पुष्पित तथा फलित अवस्था में इसके पौधे को उखाड़कर सुखाने के बाद खांसी एवं दमा के उपचार में लोबीलिया (लोबेलिया इफलेटा) या सनाय (पॉलीगेला सेनेगा) के साथ जलीय निष्कर्ष के रूप में दिया जाता है । हृदय व श्वसन पर इसकी अवसादी क्रिया होती है तथा यह श्वसनिका को शिथिल करता है । इसे टिंचर रूप में उदरशूल व पेचिश में, कृमिहर के रूप में भी इसका उपयोग किया जाता है ।

**13) आंवला** : इसे "एमब्लिका आफिसिनेलिस" कहते हैं । यह एक पौष्टिक फल वाला वृक्ष है । त्रिफला, जो मृदु विरेचक के तौर पर और सिरदर्द, पैतिकता, मंदाग्नि, कोष्ठबद्धता, अर्श, वर्धित यकृत एवं जलोदर में उपयोग किया जाता है, वास्तव में आंवला, हर (टर्मिनेलिया चेबुला) व बहेड़ा (टर्मिनेलिया बेलेरिका) के चूर्णों का समान मिश्रण होता है । इसका सूखा फल रक्तस्राव, प्रवाहिका और पेचिश में लाभदायक है तथा लोहे के साथ मिलाकर यह रक्तक्षीणता, पीलिया एवं मंदाग्नि में प्रयुक्त किया जाता है । इसके फलों का रस आंखों की सूजन में लाभकारी है ।

**14) अडूसा** : इस झाड़ीनुमा बहुवर्षीय औषधीय पादप का वानस्पतिक नाम "अधाटोडा वसीका" है । यह संपूर्ण भारत के मैदानों और उपहिमालयी क्षेत्रों में 1200 मीटर की ऊंचाई तक मिलता है । यह आयुर्वेदिक व यूनानी दवाओं की प्रसिद्ध औषधि है । इसे श्वसनी शोथ, दमे, ज्वर पीलिया, क्षयरोग के समान विभिन्न रोगों में दिया जाता है । पौधे दंत रोग, गठिया आदि में भी औषधीय रूप से उपयोगी है ।

**15) पुनर्नवा** : इसे वानस्पतिक भाषा में "बोरहाविया डिफ्यूजा" कहते हैं । यह समस्त भारत में पाया जाने वाला लालाभ पुष्पोयुक्त चिरहरित विसर्पी अंपतृण है । इस पौधे की जड़ रेचक व भूजल सानी जाती है तथा इसमें कफोत्सारी गुण होते हैं । इसका प्रयोग दमा के विकार में होता है ।

**16) सहिजन** : इसे वानस्पतिक भाषा में "मोरिंगा ओलिफेरा" कहते हैं । यह प्राय: संपूर्ण भारत में मिलता है तथा जोड़ों के दर्द तथा पेयजल शुद्ध करने में उपयोगी है । इसके अतिरिक्त कई अन्य रोगों में भी यह उपयोगी है ।

**17) नीम** : "अजाडिरेक्ट इंडिका" के वानस्पतिक नाम वाले इस वृक्ष के प्राय: हर भाग का उपयोग होता है । यह प्राय: संपूर्ण विश्व में पाया जाता है । इसे मलेरिया के उपचार में, चेचक रोग में, माइकोटॉक्सिन उत्पन्न करने वाले कवक की दर कम करने में तथा कीटनाशी के रूप में (टिप्पणी-2 में अधिक जानकारी दी गयी है ।) भी प्रयोग में लिया जाता है ।

**18) जायफल, जावित्री** : यह वृक्ष मुख्यत: नीलगिरी की पहाड़ियों, बंगाल, तमिलनाडु, कर्नाटक व केरल में पाये जाते हैं । इसे वानस्पतिक भाषा में "मिरिस्टिका फ्रेग्रैन्स" कहते हैं । इसका उपयोग टॉनिक और अवलेह बनाने में किया जाता है और इसे पेचिश, उदरशूल, आध्यान, मिचली, वमन, मलेरिया, आमवात, शियाटिका और कुष्ठ में औषधि के रूप में किया जाता है । जायफल के भीतर से एक पपड़ीनुमा पदार्थ निकलता है जिसे जावित्री कहते हैं । इसे खाद्य सामग्रियों में सुगंधित मसाले के रूप में प्रयुक्त किया जाता है ।

**19) तुलसी** : इसका वानस्पतिक नाम "ओसिमम सैंक्टम" है । यह संपूर्ण भारत में पाया जाता है । इसकी पत्तियों के रस में स्वेदकारी, कालिका ज्वरनाशी, उद्दीपक व

कफोत्सारी गुण होते हैं। यह जुकाम और श्वसनी शोध में उपयोगी है तथा दाद व अन्य त्वचा रोगों में लगाया जाता है। कान की पीड़ा में पत्तियों का रस कान में डाला जाता है तथा बच्चों के उदर विकारों में क्षुधावर्धक की भांति दिया जाता है। इसकी पत्तियों की सुगंध से मच्छर व विषैले कीट नष्ट हो जाते हैं। इसके बीज श्लेष्मी और शामक होते हैं तथा जनन मूत्र प्रणाली के विकारों में भी दिये जाते हैं।

**20) सतावरी** : "एसपैरेगस रेसीमोसस" नामक यह आरोही व बहुवर्षीय पौधा देश के समस्त उष्ण व उपोष्ण भागों में उगता है। इसकी मांसल जड़ें संग्रहणी के उपचार तथा मूत्र त्यागने की शक्ति बढ़ाने में उपयोगी है। यह कामोत्तेजक होती है।

**21) लसोड़ा** : "कोर्डिया प्रजाति" के इस पादप की पत्तियां खांसी-जुकाम में उपयोगी होती है। लसोड़े की जड़ व इसके फल कफनाशक व मूत्र प्रणाली को ठीक रखने में सहायक होते हैं।

**22) हिंगोट** : यह लगभग 6 मीटर ऊंचा कांटेदार वृक्ष है, जिसे वानस्पतिक भाषा में "बैलेनाइटीज एजिप्टियेका" कहते हैं। इसके बीज, फल, छाल व पत्तियां कृमिहारी और विरेचक हैं तथा महाराष्ट्र में पंचमहल में इसका रस मत्स्य विष की भांति प्रयुक्त होता है।

**23) कचनार** : यह वृक्ष अधो-हिमालय क्षेत्र में सिंधु नदी से पूर्व की ओर पूर्वी, मध्य तथा दक्षिणी भारत के शुष्क वनों में पाया जाता है। इसे वानस्पतिक भाषा में "बौहिनिया वैरीगेटा" कहते हैं। इसकी छाल स्तंभक, रूपांतरण और टॉनिक होती है तथा गंडमाला, त्वचा रोगों तथा व्रणों में उपयोगी है।

**24) बेल, बिल्व व श्रीफल** : इसे "ऐगल मारमीलोस" के वानस्पतिक नाम से जाना जाता है। यह डायरिया और पुरानी पेचिश में उपयोगी रहता है। बेल का फल एक उत्तम रेचक है। इसका शर्बत गर्मी में ठंडक प्रदान करता है।

**25) सनाय** : इसे वानस्पतिक भाषा में "केसिया अंगस्टिफोलिया" कहते हैं। इसे सोनामुखी भी कहते हैं। इसका मूल स्थान सीमालीलैंड तथा अरब है तथा दक्षिण भारत में एवं राजस्थान में इसकी खेती की जाती है। सनाय अपने विरेचक गुणों के कारण चिकित्सा में प्रयुक्त होती है। स्थायी कोष्ठबद्धता में यह विशेष रूप से उपयोगी है तथा वृहद की पुरस्सारण गति में वृद्धि करती है।

**डॉ. एन. के. बोहरा**
फ्लैट नं. 389, रोड नं. 10,
मिल्क मैन कॉलोनी, पाल रोड, जोधपुर

## 4. दालचीनी - एक उपयोगी घरेलू औषधि

दालचीनी को संस्कृत में बहुगंधा तथा वानस्पतिक भाषा में "सिनेमोमम झिलेनिकम" के नाम से जाना जाता है। यह हिमालय, श्रीलंका, मलाया एवं दक्षिण भारत में मुख्यतया पैदा होती है। भारत वर्ष में यह जंगलों में मिलती है एवं कुछ स्थानों पर इसे उगाया जाता है। कोंकण से लेकर दक्षिण की ओर इसके अनेक वृक्ष पाये जाते हैं। यह वृक्ष 6 वर्ष में 4-5 फीट ऊंचाई प्राप्त कर लेता है।

दालचीनी एक मूल्यवान सुगंधित पदार्थ है। यह पाचक, वायुनाशक, स्तंभक, गर्भाशय के लिए उत्तेजक एवं रक्त में श्वेत-कणों की वृद्धि करने वाली है। इसका तेल वेदनानाशक, व्रणरोधक एवं व्रणरोपक होता है। जब इसका वृक्ष 4-5 फीट ऊंचा हो जाता है तो इसकी डालियां, छिलका उतारने के लिए काटते हैं। डालियों में छुरी से हल्का चीरा लगाकर छाल उतार लेते हैं तथा इन छाल के टुकड़ों को छोटी-छोटी ढेरी में बांध लेते हैं। अब इन्हें 2-3 दिन रख देते हैं जिससे छालों में एक हल्का सा खमीर उठता है, अब इसे धूप में रख देते हैं। यह छाल कुछ मोटी एवं हल्के खाकी रंग की होती है। दालचीनी की छाल, पत्ते एवं जड़ तीनों से विभिन्न प्रकार के तेल निकलते हैं। छाल का तेल सोने जैसा लगता है व तीव्र गंध वाला होता है, जबकि पत्तों के तेल में लोंग जैसी गंध होती है। तीसरे प्रकार का तेल जो मूल दालचीनी का होता है, वह पानी से कुछ हल्का होता है तथा इसमें कपूर मिश्रित गंध रहती है।

इसके अनेक उपयोग हैं;

1) दालचीनी को खाने से आमाशय की श्लेष्मा त्वचा को उत्तेजना मिलती है, जिससे भूख बढ़ती है तथा पाचन में आसानी रहती है। उष्ण वीर्य होने के कारण यह पेट में वायु पैदा नहीं करती तथा पूर्व संचित वायु को भी निकाल देती है। इस गुण के कारण ही दालचीनी आमाशय के रोगों में उपयोगी है। पेट का फूलना, मरोड़े चलना एवं वमन को रोकने हेतु भी दालचीनी का तेल दिया जाता है।

2) आंतों के रोगों में भी यह लाभकारी है। अतिसार, जीर्ण अतिसार एवं ग्रहणी के रोगों में यह दस्त को कम कर पाचन नलिका की शक्ति बढ़ाती है। आंतों के रोगों में दालचीनी का काढ़ा भी उपयोगी है।

3) क्षय (टी. बी.) एवं क्षय के जीवाणुओं से उत्पन्न होनेवाले रोगों में दालचीनी का तेल दिया जाता है। इस तेल में उपस्थित अम्लीय पदार्थ इन जीवाणुओं को प्रभावित करता है। दालचीनी के काढ़े से रक्तस्राव बंद होता है।

4) दालचीनी को गर्भाशय को उत्तेजित करने का गुण होने के कारण यह प्रसूतिकाल में, गर्भाशय की शिथिलता बनाये रखने में उपयोगी है। परंतु इसका सेवन गर्भवती को सावधानीपूर्वक करना चाहिए क्योंकि इसका अधिक सेवन करने से गर्भ गिर भी सकता है।

5) ज्वर रोग में तथा दांतों के रोगों में भी यह लाभकारी है। इसी प्रकार बवासीर, खांसी, दमा, जलोदर, ज्वर, पागलपन आदि में भी यह उपयोगी है। सीने में जमे कफ को हटाने एवं मुंह की बदबू भी उससे मिट सकती है।

6) इसके तेल को सिर, ललाट एवं कनपटी पर लगाने से सर्दी-जुकाम, एवं सिरदर्द में आराम मिलता है। इसी प्रकार आंखों की ज्योति बढ़ाने, स्मरण शक्ति बढ़ाने, कान दर्द में एवं पक्षाघात में भी दालचीनी उपयोगी है।

दालचीनी एक उपयोगी औषधि है परंतु इसकी अधिक मात्रा गुर्दों को नुकसान पहुंचा सकती है तथा सिर दर्द भी उत्पन्न कर सकती है। अतः इसका उपयोग सावधानीपूर्वक करना चाहिए।

**डॉ. एन. के. बोहरा**
फ्लैट नं. 389, रोड नं. 10,
मिल्क मैन कॉलोनी, पाल रोड, जोधपुर

## 5. उत्तरांचल के कलात्मक फर्न

प्रकृति में जहां फूलों का महत्त्व है वहीं अपनी कलात्मकता व विशिष्ट बनावट के कारण फर्न भी कम महत्वपूर्ण नहीं हैं। यदि पुष्पवाटिका में फूलों के साथ-साथ फर्न भी उगाये जायें तो उद्यान की शोभा में चार चाँद लग जाते हैं। इन्हें गृहसज्जा, द्वार सज्जा तथा उद्यान सज्जा आदि में कहीं भी प्रयुक्त किया जा सकता है। गमले, बास्केट तथा रौकरी में भी फर्न उगाये जा सकते हैं।

ये अलंकृत कलात्मक सदाबहार फर्न हिमालय क्षेत्र में बहुतायत से पाये जाते हैं। अकेले उत्तरांचल में लगभग एक सौ प्रकार के छोटे-बड़े फर्न पाये जाते हैं जो पांच मिमी. से लेकर डेढ़ मीटर तक लंबे होते हैं। हरे फर्न तो मोहक होते ही हैं सूखे फर्न भी हरबेरियम, बधाई पत्र, उपहार आदि के काम में लाये जाते हैं। फर्न मोहक अलंकरण के लिए सर्वत्र एवं सर्वथा उपयोगी हैं।

फर्न सदाबहार पौधे हैं। पुरानी पत्तियों के गिरने से पूर्व ही नयी पत्तियां आ जाती हैं। पत्तियों की निचली सतहों पर धानी गुच्छे होते हैं जो बीजाणु कहलाते हैं। कुछ फर्न बीजाणु रहित भी होते हैं। फर्न का तना भूमिगत (राइजोम) होता है जो बहुवर्षी होता है। फर्नों की पत्तियां हरी, लालिमायुक्त, भूरी, काली, पीली अनेक प्रकार की होती हैं। फर्न नम, छायादार स्थलों, भीगी चट्टानों तथा नदियों के किनारे बहुतायत से मिलते हैं। कुछ फर्न सूखे स्थानों पर तथा कुछ वृक्षों के ऊपर भी उग आते हैं। वर्षा काल में ये अपने पूरे यौवन में होते हैं। फर्न सजावट के लिए तो उपयोगी हैं ही, ये पर्यावरण की रक्षा तथा भूमि-संरक्षण का कार्य भी करते हैं। कुछ फर्नों की शिशु पत्तियों को सब्जी के रूप में खाया भी जाता है।

उपयोगिता के अनुसार फर्नों को निम्नलिखित वर्गों में बांटा जा सकता है -

**1) गमलों, हैंगिंग बास्केट या क्यारी में लगाये जाने वाले फर्न :** एडियन्टम कैपीलस बीनरिस (वीनस हेयर फर्न या रतन ज्योति), एडियन्टम पीडेटम (मेडन हेयर फर्न), एसप्लीनियम ट्राइकोमिनिस (टफटेड फर्न), ब्लीकनम ओरियन्टेल, बाट्रीकियम लेन् जिनोसम, क्रिस्टैला डैनटेटा, ड्रायोप्टेरिस वैलीचियाना (बास्केट फर्न), ग्लेफाइरोप्टे रिडियोप्सिस इरूबीसेंस (स्नेक टेल), लोक्जोग्रमा इंवोल्यूटा, आस्थ्रण्डा रिगेलिस (रायल फर्न), पालिस्टिकम स्क्वैरोसम, टेरिस क्रीटिका, अथाइरियम ड्रिपेनोटिरम, फाइमेटोप्टरिस आक्सीलोवा, टेरिस विटेटा, पाइरोसिया बिडोमिना, गोल्डन फर्न, सिल्वर फर्न आदि।

**2) पेड़ों पर उगने वाले फर्न :** एसप्लीनियम नाइड्स (बर्ड नैस्ट फर्न), एसप्लीनियम इन्सीफारमी, लाइगोडियम आदि।

**3) खाये जाने वाले फर्न :** डिप्लेजियम एक्स्यूलेण्टम् (लिंगुण), निफ्रोलिपिस कार्डीफोलिया आदि।

**4) मुख्यद्वार (गेट) पर लगाये जाने वाले फर्न :** साइथिया स्पाइनुलोसा (ट्री फर्न), प्रोनिफियम पिननजिएनम्, डाईक्रेनोप्टेरिस लिनिएरिस (हैज फर्न) आदि।

**मोहन चंद्र कबड्वाल**
हायर सेकेंडरी स्कूल-मुक्तेश्वर,
मुक्तेश्वर, नैनीताल (उत्तरांचल)

विज्ञान कविता

## परमाणु बिजली घर

*पर्यावरण मित्र,*
*गैस रहित,*
*धूल रहित,*
*धुआं रहित,*
*न्यूनतम ईंधन,*
*न्यूनतम अपशिष्ट,*
*ईंधन के विपुल भंडार,*
*ऐसे शक्तिशाली*
*परमाणु स्रोत*
*का विद्युत-उत्पादन*
*में योगदान कर*
*आइए हम*
*अंधेरे घरों में*
*दीप जलायें,*
*उद्योगों में*
*नयी जान लायें,*
*रोगियों को*
*जीवन दान करें,*
*नये नये नित*
*अनुसंधान करें,*
*कार्यरत*
*परमाणु बिजली घरों की*
*बढ़ायें क्षमता,*
*नये संयंत्रों को*
*करें स्थापित,*
*मानव समाज की*
*होगी सेवा,*
*इस देश का*
*होगा भला,*
*अंधकार भगायें,*
*प्रकाश लायें,*
*परमाणु बिजली घरों*
*को अपनायें।*

- दिलीप भाटिया
राजस्थान परमाणु बिजली घर,
अणुशक्ति 323 303

## विज्ञान समाचार

**भा. प. अ. केंद्र से :**

**1. ट्रायोड स्पटर आयन पंप (टी. एस. आई. पी.) की टेक्नोलॉजी का हस्तांतरण :**

तकनीकी भौतिकी एवं प्रारूप इंजीनियरी प्रभाग (टी. पी. एंड पी. ई. डी.) द्वारा विकसित इस टेक्नोलॉजी का हस्तांतरण 13 अप्रैल 2000 को एक समझौते द्वारा कमल इंजिनियरिंग वर्क्स, मुंबई को किया गया है।

ट्रायोड स्पटर आयन पंप का इस्तेमाल अति उच्च निर्वात (UHV) को प्राप्त करने के लिए, आवेशित कण त्वरकों, पृष्ठ विश्लेषक स्पेक्ट्रोमीटरों, द्रव्यमान स्पेक्ट्रोमीटरों आदि में किया जाता है। इस टेक्नोलॉजी से 35, 70, 140 व 270 लीटर प्रति सेकंड धारिता के पंप निर्मित किये जा सकते हैं। इन पंपों के उपयोग से निर्वात प्राप्ति की क्रिया पूर्ण स्वच्छता से की जा सकती है क्योंकि इनमें कोई भी चालित भाग व पंप करने वाला द्रव नहीं होता है। इनका प्रचालन दाब परास (ऑपरेटिंग प्रेसर रेंज) $10^{-3}$ से $10^{-10}$ टॉर होता है।

**2. आयोडीन छन्नकों की रिग परीक्षण तकनीकी का हस्तांतरण :**

सभी न्यूक्लीय पॉवर संयंत्रों व अनुसंधान रिएक्टरों में प्रयुक्त सुरक्षा प्रणालियों (इंजिनियर्ड सेफ्टी सिस्टमों) में छन्नकों (फिल्टरों) के परीक्षणों का महत्त्व इस तथ्य से समझा जा सकता है कि इनकी आयोडीन हटाने की क्षमता 99.99 % या अधिक होनी चाहिए।

इन छन्नकों की आयोडीन व मिथाइल-आयोडाइड हटाने की दक्षता के मूल्यांकन हेतु उनका रिग परीक्षण करना पड़ता है। परीक्षण की प्रक्रिया में मूलतः परीक्षण गैस में, ज्ञात-मात्रा में रेडियो-सक्रिय आयोडीन मिलाकर उसे छन्नकों में से प्रवाहित कर, निर्गत गैस में रेडियो आयोडीन की मात्रा नापी जाती है।

भा. प. अ. केंद्र के वेस्ट मैनेजमेंट प्रभाग द्वारा विकसित इस परीक्षण प्रणाली की टेक्नोलॉजी को 21 जुलाई 2000 को किये एक समझौते द्वारा मैसर्ज़ इंडस्ट्रीयल फिल्टर्स, भरुच को हस्तांतरित किया गया।

**3. चिकित्सा प्रौद्योगिकियों का हस्तांतरण :**

9 अगस्त 2000 को एक समझौते द्वारा, मैसर्ज लारसन एंड टूब्रो लि., मैसूर को (i) इंपीडेन्स कार्डियो-वैसोग्राफ व (ii) कार्डियक आउटपुट मॉनीटर (Cardiac Output Monitor) की तकनीकियों का हस्तांतरण किया गया। इन दोनों का आधार इंपीडेंस प्लेथीस्मोग्राफी का सिद्धांत है व दोनों ही अविनाशी प्रकार की तकनीकियां हैं।

इंपीडेंस कार्डियो-वैसोग्राफ एक चिकित्सीय उपकरण है जो मानव-शरीर में केंद्रीय (सेंट्रल) व परिधीय (पेरीफिरल) रक्त प्रवाह के निर्धारण में प्रयुक्त किया जाता है। शरीर के अंतिम सिरों में, दो पृष्ठ विद्युताग्रों (सरफेस इलेक्ट्रोड्स) की मदद से विद्युत प्रवाह किया जाता है और शरीर के किन्हीं दो बिंदुओं के मध्य उत्पन्न विद्युत-विभव को अन्य एक जोड़ी विद्युताग्रों की मदद से नापा जाता हैं। इन विभव संकेतों का विश्लेषण कर शरीर में रक्त प्रवाह का ज्ञान प्राप्त किया जाता है। इस विधि के अविनाशी (नॉन-इवेसिन) होने के कारण इस यंत्र का उपयोग रोगियों पर बार-बार किया जा सकता है। इसके इस्तेमाल से हृदय की गड़बड़ियां, द्रव का रुकाव, हृदय-धमनी के रोगों का मॉनीटरन, चिकित्सीय उपचार के बाद शिराओं की गड़बड़ी, संवहन तंत्र के संरोधक रोग (Vascular Occlusive) आदि का निदान किया जा सकता है।

कार्डियक आउटपुट मॉनीटर से हृदय द्वारा जनित सिग्नल मिलता है जिसे ऑसिलोस्कोप या व्यक्तिगत कंप्यूटर के मॉनीटर पर देखा जा सकता है। इससे हृदय की पंप करने की कार्य-कुशलता का पता चलता है। यह मरीज-मॉनीटरन प्रणाली की दिखाई पड़ने वाला (फ्रंट-एंड) भाग बन सकता है जिससे हृदय धड़कने पर पंपित-रक्त आयतन (स्ट्रोक-वोल्यूम) व कार्डियक-आउटपुट का मॉनीटरन किया जा सकता है। इसका उपयोग गहन

चिकित्सा कक्षों (ICU) व गहन हृदय चिकित्सा कक्षों (ICCU) में उन रोगियों पर किया जा सकता है जिन्हें शंट (Shunt) या वाल्वी प्रतिक्षेपण (Valvular regurgitation) नहीं है।

**4. अति शुद्धता के सीरियम क्लोराइड का उत्पादन :**

सीरियम, एक विरल मृदा (rare earth) तत्त्व, का मुख्य स्रोत मोनाजाइट है। मोनाजाइट का कास्टिक सोडे द्वारा विघटन कर यूरेनियम, थोरियम व विरल मृदाओं को उनके हाइड्रॉक्साइडों में बदल लिया जाता है। इस हाइड्रॉक्साइड केक को हाइड्रोक्लोरिक अम्ल से उपचारित कर विरल मृदाओं को घोलक में प्राप्त किया जाता है। ऑक्सीकरण व अवक्षेपण (precipitation) द्वारा अपरिष्कृत सीरियम का सांद्र (80%), सीरिक हाइड्रॉक्साइड रूप में, प्राप्त किया जाता है। इससे अधिक शुद्धता (< 99.9%) के लिए विलायक निष्कर्षण विधि का प्रयोग करते हैं। इसमें एक कार्बनिक फास्फोरस यौगिक को निष्कर्षक के रूप में प्रयुक्त करते हैं। सीरियम का कार्बनिक प्रावस्था से अंश हरण (Stripping) कर, अंश हरक द्रव के वाष्पन से सीरियम क्लोराइड के मणिभ (क्रिस्टल) प्राप्त करते हैं।

पदार्थ वर्ग के विरल मृदा विकास अनुभाग ने उच्च शुद्धता का सीरियम क्लोराइड अमरीका के डेवॉस (Davos) कारपोरेशन को चिकित्सीय अनुप्रयोगों हेतु सप्लाई किया है। इस सप्लाई से, जो कि भारत से पहली बार की गयी है, विरल मृदाओं के असैनिकी अनुप्रयोगों हेतु अंतर्राष्ट्रीय बाजार में प्रवेश मिलने की संभावना बनती है।

**5. स्वास्थ्य संबंधी प्रौद्योगिकियों का विकास :**

(अ) गठिया (arthritis) के इलाज हेतु होलमियम-166 हाइड्रॉक्सी एपेटाइट कणों का विकास किया गया है। एक अस्पताल में 25 रोगियों पर इनका इस्तेमाल किया जा चुका है।

(ब) 186/188 Re को उपचारित करने हेतु $^{5}$Ci रेडियो-सक्रियता वाला नया संयंत्र प्रारंभ किया गया है।

(स) $^{32}$P लेपित स्टेंट (stent) अब 70 हृदय-रोगियों में आशाजनक परिणाम दे रहे हैं।

(द) Sr-Y उत्पादक संयंत्र का विकास व परीक्षण किया जा चुका है।

(क) समेरियम-153 फास्फेट सम्मिश्र (कांप्लेक्स) का इस्तेमाल 25 कैंसर रोगियों में दर्द-शामक के तौर पर किया गया।

(ख) केंद्र में विकसित विकिरण - उपचारित हाइड्रो-जैल जले हुए मानव-रोगियों के उपचार में प्रयुक्त की गयी। मुंबई के तीन अस्पतालों ने इसे प्रभावकारी पाया।

**6. राजस्थान कृषि विश्व विद्यालय से सहयोग :**

13 जुलाई-2000 को राजस्थान कृषि विश्व विद्यालय, बीकानेर तथा भा. प. अ. केंद्र के मध्य हुए एक मेमोरेंडम ऑफ अंडरस्टेंडिंग (MOU) के अनुसार, दोनों संस्थाएं मिलकर अनुसंधान कार्य व विकिरण तथा रेडियो-समस्थानिकों के अनुप्रयोगों पर प्रयोग करेंगी। इनका ध्येय पूर्वी सूखे क्षेत्र विशेषतः राजस्थान के कृषि व पशु धन को उन्नत करना है।

रेगिस्तान का बड़ा इलाका, राजस्थान के जैसलमेर, बाड़मेर, बीकानेर और जोधपुर के जिले, पर्यावरण की वजह से पीछे हैं। कृषि उत्पादन कम वर्षा व अधिक तापक्रम के कारण अस्थिर रहता है। कृषि की असफलता के अलावा, सूखा हवा द्वारा भूमि के कटाव और रेत के टीलों को बढ़ाता है जो उत्पादक कृषि भूमि को ढक लेते हैं। न्यूक्लीय तकनीकों का अनुप्रयोग, कृषि-अनुसंधान में काफी लाभप्रद हो सकता है। इस समझौते के अंतर्गत 1.26 करोड़ रुपये का अनुदान कृषि अनुसंधान केंद्र, बीकानेर में रेडियो ट्रेसर प्रयोगशाला स्थापित करने हेतु दिया गया है। इससे बी.ए.आर.सी. में विकसित फसलों को जांचने व बढ़ाने का कार्य तथा न्यूक्लीय कृषि व फसल पश्चात की टेक्नोलॉजी में सहयोगी-कार्यक्रम चलाया जा सकेगा।

प्रस्तुति : **डॉ. कैलाश चंद्र भल्ला**
संपादक - वैज्ञानिक

## अन्य विज्ञान समाचार

### 1. अब शुक्राणु प्रयोगशाला में उगेंगे !

वैज्ञानिकों ने प्रयोगशाला में मानव शुक्राणुओं के उगाने में अद्‌भुत सफलता प्राप्त कर ली है । इनके द्वारा अनुर्वर (Infertile) पुरुषों के लिए संतानोत्पत्ति का मार्ग प्रशस्त हो गया है । जापान के टोकियो नगर में माचिदा क्षेत्र के वैज्ञानिकों ने पुरुष कोशिकाओं को बीजोत्पादन हेतु पुनर्प्रक्रमित (reprogramme) करने में अभूतपूर्व सफलता अर्जित की है। इस उपलब्धि के फलस्वरुप पुरुष - नर एवं मादा दोनों प्रकार के संतान उत्पन्न करने में सक्षम होंगे और वे हर्षपूर्वक स्वयं को भावी संतान की माता और पिता दोनों कहलाने के अधिकारी हो सकेंगे ।

संप्रति केवल चूहों पर इस तकनीक के सफल परीक्षण किये गये हैं जिसके अंतर्गत भ्रूण कोशिकाओं (Embryo cells) को एक पूर्वजक करने (Cloning) के माध्यम से शुक्राणुओं में परिवर्तित किया गया है । इस विधा का जीवंत परीक्षण पुरुषों में करना अभी शेष है । यद्यपि जापानी प्रशासन ने एक पूर्वजनन मनुष्यों के संदर्भ में प्रतिबंधित कर दिया है परंतु वैज्ञानिक क्षेत्रों में इस तकनीक के प्रयोग को प्रतिबंध के घेरे से बाहर रखने के लिए पर्याप्त औचित्य प्रस्तुत किया जा चुका है । वास्तव में इस तकनीक का उपयोग मानव शिशुओं के बीजाधार उत्पन्न करने हेतु किया जाता है और मानव शिशु उत्पादन हेतु नहीं ।

चिकित्सा विज्ञान के नैतिक मूल्यों के पक्षधरों ने इस तकनीक की निंदा की है और इस उपलब्धि को आधुनिक विज्ञान की एक और क्रूरता कहा है । इन लोगों का विश्वास है कि इस तकनीक में मनुष्य जीवन को एक प्रयोगात्मक वस्तु समझा जा रहा है और कालांतर में इसका उपयोग अन्य प्रायोगिक क्षेत्रों में भी किया जा सकता है। इस नवीनतम तकनीक का विवरण कुछ समय पूर्व जापान में संपन्न हुई जैव वैज्ञानिकों की एक संगोष्ठी में किया गया था । वर्ष 2001 के अंत में इसे अंतर्राष्ट्रीय वैज्ञानिक सम्मेलन में भी प्रस्तुत किये जाने की पूर्ण संभावना है । मित्सुबिशी कासेई संस्थान में शोध कर रहे पोशयाकी नोज़ ने हाल में इस प्रयोग की क्रियाविधि के बारे में व्याख्यान दिया और स्पष्ट रुप से बताया कि प्राक्‌भ्रूण की कौन सी कोशिकाएं मानवीय जनन को कोशिकाओं (Germcells) में परिणत हो जाती हैं ।

डॉ. नोज़ के अनुसार निषेचनोपरांत आरंभिक कुछ दिनों में भ्रूण वास्तव में तथाकथित स्तंभ कोशिकाओं (Stem Cells) का एक समूह मात्र होता है और इन स्तंभ कोशिकाओं में से प्रत्येक शरीर के पृथक्-पृथक् अंगों के निर्माण और विकास के निमित्त प्रक्रमित होती है । डॉ. नोज़ ने अपने प्रयोगों में आनुवंशिकीय चिन्हकों (Genetic Markers) के माध्यम से यह ज्ञात किया है कि कुछ कोशिकाओं में ऐसे जीन उपस्थित होते हैं जो शुक्राणु उत्पत्ति के लिए उत्तरदायी होते हैं । उन्होंने इन कोशिकाओं से शुक्राणु विकसित करने में सफलता अर्जित की उसके पश्चात् इन्हें अंडकोषों में पुनर्स्थापित किया गया । ऐसे शुक्राणु आनुवंशिकीय स्तर पर सामान्य होते हैं और निस्संदेह जीवन सर्जक भी । अंडकोषों में उत्पन्न होने वाले शुक्राणु और स्तंभ कोशिका सृजित शुक्राणु ठीक एक जैसे ही गतिमान और सक्षम होते हैं फिर भी अभी यह परीक्षण करना शेष है कि ये शुक्राणु मानव अंडों का निषेचन कर सकते हैं अथवा नहीं ।

### 2. त्वचावर्ण और कामेच्छा

प्रख्यात नोबेल पुरस्कार विजेता जेम्स वॉटसन जिन्होंने क्रिक नामक वैज्ञानिक के साथ संयुक्त रूप से DNA की दोहरी वलय (Double Heli'x) संरचना की खोज की थी, ने एक बार पुनः समस्त वैज्ञानिक समुदाय को एक अन्य नवीनतम तथ्य के द्वारा अचंभे में डाल दिया है । उन्होंने शोध के परिणामों के आधार पर यह विवेचना की है कि त्वचा के वर्ण और कामेच्छा में घनिष्ठ संबंध होता है । डॉ. वॉटसन ने एक वैज्ञानिक सम्मेलन में सभी उपस्थित वैज्ञानिकों को स्तंभित कर दिया जब उन्होंने स्पष्ट किया कि कृष्ण वर्ण त्वचा वालों में उग्रतर कामेच्छा होती है । उन्होंने इस तथ्य को प्रमाणित करने के संदर्भ में कृष्णवर्ण स्त्रियों को अधोवस्त्रों में पुरुषों के समक्ष प्रदर्शित किया और उनकी भाव भंगिमाओं तथा मनोदशा का अध्ययन किया ।

जेम्स वॉटसन के प्रयोग एक प्रकार की प्रोटीन पोम-सी (Pom-C) के प्रभावों पर आधारित थे क्योंकि यह प्रोटीन मानव शरीर में कई हार्मोनों के उत्पादन में सक्रिय भूमिका अदा करती है। इन हार्मोनों में मेलानीन (Melanin) भी सम्मिलित है जो त्वचा वर्ण का आधार तत्त्व होती है। एक अन्य हार्मोन "बीटा एंडोमार्फिन" (B-Endorphine) हमारी मनःस्थित के उतार-चढ़ाव को नियंत्रित करता है तथा "लेप्टिन" नामक हार्मोन वसीय उपापचय (Fat metabolism) में विशिष्ट भूमिका अदा करता है। डॉ. वाटसन के अनुसार इन हार्मोनों की सांद्रता में सूर्य के प्रकाश के द्वारा वृद्धि प्रेरित की जा सकती है। उन्होंने कई मनुष्यों पर मेलानीन कोटीकाकरण द्वारा प्रविष्ट कराके प्रयोग किये और अध्ययनों के आधार पर यह प्रमाणित किया कि मेलानीन के स्तर में वृद्धि के अनुपात में कामेच्छा में भी प्रोत्कर्ष (upsurge) पाया जाता है। इन प्रयोगों के दौरान उन्होंने प्रकाश के प्रभाव का भी अध्ययन किया और स्पष्ट किया कि सूर्य के खुले प्रकाश में रहने वाले लोगों में त्वचावर्ती मेलानीन स्तरों में वृद्धि होती है और इसके परिणामस्वरूप कामेच्छा में भी अभिवृद्धि होती है। वाटसन ने बताया कि बिकिनी वस्त्रधारी महिलाओं में बुर्काधारी मुस्लिम महिलाओं की तुलना में अग्रतर कामेच्छा की प्रवृत्ति प्रदर्शित होती है।

प्रस्तुति : **विजया तिवारी**
नामकुम, रांची 834 010

### 3. दुग्धपान कराती मां के पास धूम्रपान एवं कीटनाशक शिशु के लिए घातक

गर्भवती महिला और अपने शिशु को स्तनपान कराती मां के पास सिगरेट, बीड़ी या अन्य किसी भी प्रकार का धूम्रपान करने से गर्भस्थ एवं नवजात शिशु को दमा रोग हो जाने एवं शिशु के मंद बुद्धि का हो जाने की संभावनाएं प्रबल हो जाती हैं।

जर्मनी के प्रख्यात शिशु रोग विशेषज्ञ डॉ. ब्रोशनर ने अपने विस्तृत अध्ययन से यह निष्कर्ष निकाला है कि गर्भवती मां द्वारा स्वयं या उसके निकट बैठकर किसी भी प्रकार का धूम्रपान करने से गर्भ में पल रहे शिशु को दमा रोग होने की संभावनाएं बढ़ जाती हैं एवं यही स्थिति शिशु को स्तनपान कराती मां के पास बैठकर धूम्रपान करने से भी उत्पन्न हो सकती है। डॉ. ब्रोशनर के अनुसार गर्भस्थ शिशु को दमा के लक्षण उत्पन्न होने से उसका विकास रुक जायेगा तथा जन्म के उपरांत उसका भार सामान्य शिशुओं से कम रहेगा। साथ ही उसके मंद बुद्धि के होने की संभावनाएं भी प्रबल हो जाती हैं। डॉ. ब्रोशनर की सलाहानुसार गर्भस्थ मां तथा शिशु को दूध पिलाती मां को न तो स्वयं धूम्रपान करना चाहिए और न ही धूम्रपान करने वालों के समीप बैठना चाहिए।

जर्मनी के ही एक अन्य शिशु रोग विशेषज्ञ डॉ. माइकल क्रोविकन द्वारा किये गये शोध परिणामों के अनुसार घरेलू कीड़ों-मकोड़ों की रोक-थाम के लिए घरों में किये जाने वाले कीटनाशकों के छिड़काव में कीटनाशकों की प्रतिशत मात्रा अधिक होने से प्रयुक्त कीटनाशक सांस के द्वारा बच्चों और बड़ों के शरीर में जाकर इकट्ठा होते रहते हैं। जिसके फलस्वरूप वे विभिन्न रोगों के शिकार हो जाते हैं। कीटनाशकों के इस दुष्प्रभाव से बड़ों की तुलना में छोटे बच्चे शीघ्र प्रभावित होते हैं। कीटनाशकों के प्रभाव में आते ही बच्चे और बड़े व्यक्तियों में सुस्ती के लक्षण उत्पन्न हो जाते हैं और कुछ समय उपरांत उनमें दमा और सांस के रोगों के लक्षण उत्पन्न हो जाते हैं। रोगी व्यक्ति में ये लक्षण लंबे समय तक बने रहते हैं। डॉ. क्रोविकन के अनुसार पीड़ित बच्चों में आगे चलकर विभिन्न मानसिक रोगों के लक्षण भी उत्पन्न हो सकते हैं।

### 4. हाथ मिलायें लेकिन धीरे से

किसी भी परिचित से मिलते ही या अपरिचित व्यक्ति से परिचय होने पर प्रायः ही हाथ जोड़कर अभिवादन करने की बजाये हाथ मिलाने की परंपरा ज्यादा प्रचलित है। लेकिन सावधान, हाथ मिलाने की यह आदत कहीं आपके हाथों में गठिया (आर्थराइटिस) रोग उत्पन्न होने का कारण न बन जाये।

जर्नल ऑफ आर्थराइटिस एंड रियूमेटिज्म में प्रकाशित एक शोध अध्ययन के अनुसार जोर से दबाकर या अतिरेक

में आकार हाथ मिलाने वाले व्यक्तियों के हाथों और उंगलियों में गठिया रोग होने की संभावनाएं प्रबल हो जाती हैं । उक्त परिणाम शोधकर्ताओं द्वारा हाथों और उंगलियों में उत्पन्न होने वाले गठिया रोग पर किये गये एक शोध अध्ययन के फलस्वरूप सामने आये हैं । हाथ मिलाने से होने वाले इस प्रकार के जोड़ों के दर्द एवं गठिया रोग के निवारण के लिए उक्त जर्नल में औषधियों के सेवन के साथ-साथ चिकित्सक के परामर्श के अनुसार हाथों को मजबूत बनाने वाले विविध व्यायामों को भी निरंतर करते रहने की आवश्यकता पर बल दिया है ।

तो अब, अगली बार आप जब भी किसी परिचित या अपरिचित से मिलें तो भारतीय परंपरा का अनुसरण करते हुए सामने वाले को करबद्ध प्रणाम करें और अपने हाथों और उंगलियों को गठिया रोग से सुरक्षित रखें ।

**5. उलूक किस प्रकार चारों दिशाओं में देख पाता है ?**

पक्षियों में उलूक परिवार में दस विभिन्न प्रकार के उलूक पाये जाते हैं । प्रकृति ने उलूक में कई विलक्षण प्रकार की विशेषताएं प्रदान कर रखी हैं । संभवत: इसी कारण भारतीय परंपरा में उलूक समृद्धि एवं संपदा की अधिष्ठात्री देवी श्रीलक्ष्मी जी का वाहन है । सभी प्रकार के पक्षियों में उलूक इस मायने में भी अनूठा पक्षी है कि यह अपनी गर्दन चारों ओर घुमा सकता है जबकि अन्य पशु-पक्षी कुछ हद तक सिर्फ दायें-बायें ही घुमा सकते हैं ।

एक ही स्थान पर बैठे-बैठे अपने चारों ओर देख सकने के लिए प्रकृति ने उल्लू को अत्यधिक बड़ी-बड़ी आंखें और अत्यधिक लचीली गर्दन प्रदान की है । गर्दन अत्यधिक लचीली होने के कारण उल्लू अपने सिर को 270 अंश तक घुमा सकने में समर्थ हो जाता है और शेष 90 अंश क्षेत्रफल की चीजों को वह अपनी बड़ी-बड़ी आंखों की सहायता से देख लेता है क्योंकि उलूक की आखें इस मायने में भी अनूठी होती हैं कि वे एक ही समय में मुक्त रूप से अलग-अलग दिशाओं में देख सकती हैं । उपरोक्त विशेषताओं के अतिरिक्त उलूक की आंखों में अन्य पक्षियों एवं मानव आंख की तुलना में रात्रि के अंधेरे में देख सकने की क्षमता 100 गुना अधिक होती है क्योंकि उलूक की आंखों में पायी जाने वाली रॉड कोशिकाओं की संख्या तुलनात्मक रूप से 10 गुना अधिक होती है ।

**6. आर्कटिक क्षेत्र के मेघों में मौजूद नाइट्रिक अम्ल से ओजोन परत का क्षरण**

हमारी पृथ्वी से लगभग 22-25 किमी. ऊपर वायुमंडल में गहरे-हरे नीले रंग की गैस की 25-28 मि. मी. मोटी एक पर्त मौजूद रहती है जो सूर्य से आने वाली पराबैंगनी विकिरणों के घातक प्रभाव से पृथ्वी के समस्त जीव-जंतु एवं वनस्पतियों की रक्षा करती रहती हैं । गहरे हरे-नीले रंग की इस गैसीय पर्त को 'ओजोन पर्त' कहा जाता है । इस प्रकार यह ओजोन पर्त पृथ्वी के लिए एक सुरक्षा कवच का कार्य करती है परंतु दुर्भाग्य से विभिन्न मानवीय कारणों से इस पर्त का शनै: शनै: क्षय होता जा रहा है जिसके फलस्वरूप पृथ्वी के जीव-जंतु एवं वनस्पतियां पराबैंगनी विकिरणों की मारक प्रभाव के जद में आते जा रहे हैं ।

'मैक्स प्लांक इंस्टीट्यूट ऑफ न्यूक्लियर फिजिक्स' हाइडल बर्ग, जर्मनी के शोधकर्ताओं ने आर्कटिक क्षेत्र के ऊपर पाये जाने वाले मेघों के रसायनिक विश्लेषण में ओजोन पर्त का क्षरण करने वाले एक कारक - नाइट्रिक अम्ल की उपस्थिति पहली बार दर्ज की है । पृथ्वी की सतह से 15-24 किमी. ऊपर पाये जाने वाले ये ध्रुवीय स्ट्रेटोस्फेरिक मेघ एक ऐसे स्थल का कार्य करते हैं जहां पर वे सभी रासायनिक क्रियाएं संपन्न होती हैं जो ओजोन पर्त का क्षरण करती रहती हैं । ओजोन पर्त के क्षरण के लिए मानव निर्मित कई अन्य कृत्रिम रसायनिक पदार्थ जैसे क्लोरोफ्लोरोकार्बन्स भी जिम्मेदार हैं ।

**7. सीधे हवा से बिल्कुल मुफ्त प्रोटीन**

संपूर्ण विश्व में तेजी से बढ़ती हुई जनसंख्या की उदरपूर्ति के लिए अधिकाधिक भोजन की आवश्यकता भी उसी अनुरुप में बढ़ती जा रही है । भरपेट भोजन के साथ-साथ प्रति व्यक्ति को उसकी शारीरिक क्षमता के अनुरुप प्रोटीन की उपलब्धता भी आवश्यक है । परंतु सभी के लिए समुचित मात्रा में प्रोटीन की उपलब्धता

दिनो-दिन एक गंभीर समस्या बनती जा रही है ।

आहार शास्त्रियों के अनुसार मनुष्य के दैनिक भोजन में प्रोटीन की इतनी मात्रा अवश्य होनी चाहिए जितनी कि दैनिक कार्यों में शरीर से उसकी हानि होती है । बचपन तथा शारीरिक बढ़वार के समय तो शरीर को प्रोटीन की आवश्यकता और भी अधिक हो जाती है । लेकिन प्रोटीन और मानव शरीर के बीच आपूर्ति एवं खर्च का यह अनुपात पापुआ न्यूगिनी में रहने वाले पापुआ जन-जाति के लोगों में बिल्कुल विपरीत पाया गया है ।

पापुआ जन-जाति में प्रोटीन संबंधी इस विरोधाभास का पता वैज्ञानिकों को उनके आहार विषयक एक अध्ययन के दौरान हुआ । अपने उक्त अध्ययन से वैज्ञानिकों को ज्ञात हुआ कि ये लोग जितनी मात्रा में प्रतिदिन प्रोटीन का उपभोग करते हैं उससे उनके शरीर में प्रोटीन संतुलन हो ही नहीं सकता है । पापुआ जन-जाति के लोग प्रतिदिन औसतन केवल 20-30 ग्राम तक प्रोटीन का उपयोग करते हैं लेकिन उनका शरीर इस मात्रा से 50 प्रतिशत से भी अधिक प्रोटीन प्रतिदिन खर्च करता है । प्रतिदिन उपभोग और खर्च के बीच आने वाले 10-15 ग्राम प्रोटीन के इस अंतर की क्षतिपूर्ति शरीर किस प्रकार करता है, वैज्ञानिकों के लिए यह तथ्य एक अबूझ पहेली बना हुआ है ।

वैज्ञानिकों ने प्रोटीन की इस पहेली को हल करने के लिए यह परिकल्पना प्रस्तुत की कि पापुआ जन-जाति के लोगों का शरीर प्रोटीन की उक्त मात्रा हवा से प्राप्त करता है । इस परिकल्पना के अनुसार जन-जाति के लोगों की अंतड़ियों में रहने वाले कुछ विशेष प्रकार के जीवाणु पेट में रहने वाले पाचन रसों में मौजूद नाइट्रोजन से प्रोटीन का संश्लेषण करते रहते हैं । परंतु यदि इस परिकल्पना को सत्य मान लिया जाय तो जीवाणुओं द्वारा प्रोटीन के संश्लेषण की यह क्रिया विधि अन्य व्यक्तियों के शरीर में क्यों नहीं पायी जाती है ? परंतु इसका रहस्य भी संभवत: पापुआ जन-जाति के लोगों के आहार की आदतों में छुपा है । ये लोग अपनी गुजर-बसर मुख्यत: शकरकंदी खाकर करते हैं जिसमें स्टार्च और शर्करा भरपूर मात्रा में होती है। लेकिन शकरकंदी में प्रोटीन की प्रतिशत मात्रा इतनी कम होती है कि इससे उनके प्रतिदिन के प्रोटीन के उपभोग और खर्च की मात्राओं में कोई साम्य नहीं रह जाता है ।

कुछ भी हो, पापुआ न्यूगिनी में किये गये उपरोक्त अध्ययन से नयी शताब्दी में होने वाली प्रोटीन समस्या के समाधान के लिए हमें एक संभावित समाधान तो मिल ही गया है । और ठीक भी है, सीधे हवा से 'बिल्कुल मुफ्त प्रोटीन' प्राप्त करने की संभावना कितनी रोचक और आकर्षक है ।

### 8. मनुष्यों से फैलती है कुत्तों में खुजली की बीमारी

अभी तक यह आम धारणा रही है कि मनुष्यों में कई रोगों का संक्रमण एवं प्रसार पशुओं से होता है । इस धारणा का एक प्रमुख उदाहरण है रिसस बंदरों में पाये जाने वाले विषाणु से मनुष्य में एड्स रोग का संक्रमण । परंतु इस धारणा के विपरीत अब वैज्ञानिकों ने प्रमाणित कर दिया है कि कुत्तों में खुजली की बीमारी का संक्रमण मनुष्यों से ही होता है ।

उ. प्र., इज्जतनगर स्थित 'भारतीय पशु चिकित्सा अनुसंधान संस्थान (आईवीआरआई)' के वैज्ञानिकों ने पहली बार मानव शरीर में पाये जाने वाले सूत्र कृमि (थ्रेड वर्म) 'स्टोगाइलिस स्टरकोरेलिस' से कुत्तों में होने वाली खुजली के संक्रमण का पता लगाया जाता है । मनुष्यों में यह कृमि मुख्यत: छोटी आंत में पाया जाता है और प्राय: दस्त, स्नोफीलिया, मंदबुद्धि, शारीरिक दुर्बलता एवं खुजली जैसे रोगों के लक्षण उत्पन्न करता है । इस कृमि के अत्यंत सूक्ष्म आकार के होने के कारण संक्रमण का वर्षों तक पता ही नहीं चल पाता है । एक अनुमान के अनुसार संपूर्ण विश्व में लगभग 3.49 करोड़ व्यक्ति इस परजीवी से संक्रमित हैं । इनमें से लगभग 2.1 करोड़ व्यक्ति म्यांमार, थाईलैंड, जावा एवं अन्य एशियाई देशों में हैं ।

मनुष्यों में स्टोगाइलिस स्टरकोरेलिस की उपस्थिति सर्वप्रथम 1887 में फ्रांस के औपनिवेशिक सैन्य टुकड़ियों में हुए अनियंत्रित दस्त के मरीजों में देखी गयी थी । उसके बाद द्वितीय विश्वयुद्ध के दौरान विभिन्न देशों के युद्ध बंदियों में इस सूत्रकृमि के संक्रमण से उत्पन्न अनेक

रोगों के पाये जाने का उल्लेख मिलता है। द्वितीय विश्वयुद्ध के ही दौरान अमरीका की 31 वीं सैन्य बटालियन के सैनिकों में उनके उदर, कूल्हों तथा जांघों की त्वचा पर लाल चकत्ते पाये गये जो इन सैनिकों में इस कृमि के संक्रमण के प्रमाण थे। परंतु आई वी आर आई के वैज्ञानिकों ने देश में पहली बार मानव कृमियों से कुत्तों में खुजली के संक्रमण का पता लगाया है। इन कृमियों के संक्रमण से कुत्तों में उदर, पूंछ एवं पिछली टांगों पर लाल चकत्ते पड़ जाते हैं और उन्हें खुजली हो जाती है।

मानव या पालतू कुत्तों में रोग का संक्रमण होने की स्थिति में यद्यपि दोनों में रोग के लक्षण समाप्त होते थे परंतु दोनों की चिकित्सा अलग-अलग प्रकार से की जाती थी। हाल के कई वर्षों में कुत्तों, पिल्लों एवं उनके मालिकों को एक ही तरह की खुजली होने तथा दोनों के मल के पैथोलॉजिकल परीक्षणों में एक ही प्रकार के अंडे एवं लार्वा पाये जाने से चिकित्सा वैज्ञानिकों को इस समानता पर शोध किये जाने की आवश्यकता महसूस हुई। विभिन्न स्तरों पर वैज्ञानिकों द्वारा किये गये गहन शोध से यह पता चला कि कुत्तों एवं उनके मालिकों में यह रोग स्टोगाइल्सि स्टरकोरेलिस सूत्रकृमि के ही कारण उत्पन्न होता है। इस प्रकार इस कृमि के संक्रमण के कारण मनुष्यों एवं कुत्तों में होने वाली खुजली का अब सफल निदान संभव हो सकेगा।

### 9. मुर्गियों में कैंसर विषाणु की पहचान के लिए किट का विकास

'भारतीय पशु चिकित्सा अनुसंधान संस्थान' इज्जतनगर के वैज्ञानिकों ने देश में पहली बार मुर्गियों में कैंसर पैदा करने वाले विषाणु की पहचान के लिए एक किट का विकास किया है जिसे 'कोपाल किट' का नाम दिया गया है। इस किट की सहायता से मुर्गियों और अंडों में कैंसर पैदा करने वाले 'एवियन ल्यूकोसिस विषाणु' (ए एल वी) की पहचान अब उनकी जीवित अवस्था में ही संभव हो सकेगी। देश में अभी तक 'ए एल वी' जन्म कैंसर की पहचान इस विषाणु से ग्रसित मुर्गियों की मृत्यु के उपरांत केवल उनके शव परीक्षण से ही संभव थी।

'ए एल वी' ग्रसित अस्वस्थ मुर्गियों से यह विषाणु उनके अपने तथा स्वस्थ मुर्गियों के अंडों में फैलने लगता है जिसके कारण इन अंडों से निकलने वाले चूजे भी रोगग्रस्त हो जाते हैं और इस प्रकार विषाणु की संक्रमणशीलता बढ़ती जाती है। कैंसर के अतिरिक्त यह विषाणु मुर्गियों में विभिन्न अन्य रोग जैसे हृदय रोग, यकृत रोग, खून की कमी एवं सूखा रोग आदि उत्पन्न करता है। रोगग्रस्त मुर्गियों की प्रजनन क्षमता काफी कम हो जाती है जिससे उनकी उत्पादन क्षमता पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। रोगी मुर्गियों की अंडा उत्पादन की दर 25 से 30 अंडा प्रति मुर्गी प्रति वर्ष तक कम हो जाती है। कैंसर के अलावा अन्य विभिन्न रोगों के कारण मुर्गियों की मृत्यु दर में 10 प्रतिशत तक की बढ़ोत्तरी हो जाती है जिसके कारण व्यापारिक हितों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

कोपाल किट के विकास से न केवल रोगग्रस्त मुर्गियों के जीवित रहते ही उनका परीक्षण संभव हुआ है बल्कि अंडों से चूजे निकालने वाली मशीन में अंडों को रखने से पहले ही उनका परीक्षण करके रोगग्रस्त अंडों को अलग कर नष्ट किया जा सकेगा जिससे 'ए एल वी' जन्य विभिन्न अन्य रोगों पर भी नियंत्रण किया जा सकेगा। इस प्रकार प्रति वर्ष लगभग तीन अरब अंडों तथा 7.5 करोड़ चूजों को रोग ग्रस्त होने से बचाया जा सकेगा तथा रोग के प्रभावी नियंत्रण से मांस तथा अंडों की गुणवत्ता को भी बढ़ाया जा सकेगा।

प्रस्तुति : **डॉ. राज किशोर**
डॉ. राम मनोहर लोहिया अवध विश्वविद्यालय,
फैजाबाद

# हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद, भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र

## वार्षिक रिपोर्ट (1999-2000)

हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद की 32 वीं, वार्षिक रिपोर्ट आपके सम्मुख रखते हुए मुझे अत्यंत हर्ष हो रहा है. वर्तमान कार्यकारिणी का चुनाव 31.8.1999 को हुआ था। इसका कार्यकाल वित्तीय वर्ष 1999-2000 तथा 2000-2001 रहेगा। पिछली कार्यकारणी ने 31 वीं वार्षिक आम निगम सभा दिनांक 11 अक्तूबर तक कार्य किया। अक्तूबर तक का वित्तीय लेखा-जोखा तैयार करने में एक महीने का अतिरिक्त समय लगा। इस बीच परिषद के सभी कार्य चलते रहे, जिनका विवरण निम्नलिखित है।

### 1.0 संगोष्ठी, कार्यशाला, वार्ताएं :

#### 1.1 स्वास्थ्य संबंधी संगोष्ठी

परिषद की इस लोकप्रिय कड़ी में इस बार **गुर्दे एवं यकृत रोग** पर संगोष्ठी का आयोजन 12 जून 1999 को हुआ। ट्रेनिंग स्कूल के मल्टीपरपज सभागृह में आयोजित इस संगोष्ठी में परमाणु ऊजा परिवार के सदस्यों ने भारी संख्या में भाग लिया। प्रमुख वार्ताकार मुंबई के प्रसिद्ध अस्पतालों के विषय विशेषज्ञ थे जिन्होंने अपना अमूल्य योगदान व समय दिया। इस आयोजन के लिए परिषद डॉ. आशा दामोदरन, श्री ज्ञानोत्तम लाल गोस्वामी और डॉ. डी. पी. पांडेय का धन्यवाद ज्ञापन करती है।

#### 1.2 राज्यभाषा स्वर्णजंयती वर्ष का प्रारंभ

14 सितंबर 1999 को संविधान सभा द्वारा हिंदी को भारत की राजभाषा के रुप में स्वीकार करने के ऐतिहासिक निर्णय के 50 वर्ष पूरे हो गये थे। देश ने वर्ष भर - यथा 14 सितंबर 1999 से 14 सितंबर 2000 तक राजभाषा स्वर्णजयंती वर्ष मनाने का निर्णय किया था। हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद ने इसको कार्यान्वित करते हुए 14 सितंबर 1999 के दिन **"भारतीय परमाणु ऊर्जा कार्यक्रम - एक समीक्षा"** शीर्षक पर एक दिवसीय वैज्ञानिक संगोष्ठी का आयोजन भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र के केंद्रीय सभागृह में किया। इसमें देश के नाभिकीय कार्यक्रम का पुनरावलोकन किया गया। डॉ. आर. चिदंबरम् ने संगोष्ठी का उदघाटन किया और डॉ. अनिल काकोड़कर ने अध्यक्षीय भाषण दिया। परमाणु ऊर्जा विभाग की मुंबई स्थित सभी इकाइयों का इसमें पूरा सहयोग मिला। भारतीय नाभिकीय विद्युत कार्यक्रम, भारी पानी उत्पादन में हमारी आत्मनिर्भरता, भारतीय आइसोटोप कार्यक्रम, परमाणु ऊर्जा के विभिन्न नियामक पहलू, रेयर अर्थ्स का उत्पादन और विक्रय आदि विषयों पर सारगर्भित वार्ताएं परमाणु ऊर्जा विभाग की इकाइयों के विशेषज्ञों द्वारा दी गयीं। परिषद के अध्यक्ष श्री अनिल कुमार आनंद ने **'नाभिकीय ईंधन का विकास'** वार्ता में नाभिकीय ईंधन के पिछले 57 वर्षीय विकास पर नजर डाली और **प्रगत भारी पानी रिएक्टर** पर पहली हिंदी वार्ता श्री हर्षद प्रसाद व्यास ने प्रस्तुत की। अन्य वक्ता श्री बी. एस. गुलाटी, डॉ. एस. एम. राव, श्री वी. के. वर्मा और श्री एम. दास थे। सभी वार्ताएं उच्च कोटि की थीं जिनके लिए हम सभी के हार्दिक आभारी हैं। संगोष्ठी का आयोजन श्री रमेश चंद्र पंत ने किया।

अवसर की गरिमा को बढ़ाने के लिए सभी वार्ताओं का संकलन कर **"वैज्ञानिक"** का एक विशेष रंगीन **राजभाषा स्वर्ण जयंती अंक** जुलाई-सितंबर 1999 निकाला गया। इस अंक में हिंदी के कार्यों से जुड़े कुछ विशेष व्यक्तियों जैसे डॉ. माधव सक्सेना, श्री राम निवास आर्य, डॉ. देवकी नंदन, और सुश्री साधना हेमराजानी आदि द्वारा दिये गये लेखों को भी प्रकाशित किया। इस अंक को निकालने में "वैज्ञानिक" संपादन मंडल व व्यवस्थापन मंडल का विशेष धन्यवाद।

## 1.3 कंप्यूटर में हिंदी कार्य का प्रशिक्षण

12-14 जनवरी 2000 को सायरस व्याख्यान कक्ष में, हिंदी कक्ष द्वारा परिषद के सदस्य श्री राम प्रकाश हंस की सहायता से एक कार्यशाला का आयोजन किया। इसमें कार्मिक विभाग के कर्मचारियों को कंप्यूटर में उपलब्ध सॉफ्टवेयर की सहायता से हिंदी कार्य का प्रशिक्षण दिया गया। कार्यशाला में श्री हंस द्वारा विकसित द्रौपदी सॉफ्टवेयर की जानकारी दी गयी। कार्यशाला का एक उद्देश्य **टेम्प्लटों** की सहायता से नित्यकर्म के विभागीय आदेशों को अंग्रेजी के साथ-साथ हिंदी में उपलब्ध कराना था।

## 1.4 प्रश्नमंच

अणुशक्तिनगर स्थित परमाणु ऊर्जा केंद्रीय विद्यालयों के छात्रों के लिए प्रश्नमंच का कार्यक्रम केंद्रीय सभागृह में 25 फरवरी 2000 के दिन आयोजित किया गया। दस वर्षों तक यह कार्यक्रम डॉ. विजय कुमार मनचंदा तथा उनकी टीम द्वारा चलाया गया। स्कूली छात्रों एवं केंद्र के बीच एक कड़ी का कार्य करने वाला यह कार्यक्रम हमेशा की तरह इस बार भी लोकप्रिय रहा और सभागृह पूरी तरह से भरा रहा। इस कार्यक्रम में समय के अनुसार परिवर्तन करते हुए पहली बार कंप्यूटर उपकरणों का प्रयोग किया गया। इसका आयोजन सहसचिव श्री स्वराज कुमार अग्रवाल ने किया। कार्यक्रम संबंधी कंप्यूटरीकरण के विकास में सर्व श्री जी. भारद्वाज, जेकब जोन, नीलेश गोयल और अमिताभ मिश्रा ने महत्त्वपूर्ण कार्य किया।

## 1.5 नोबेल पुरस्कार 1999 पर वार्ताएं

वर्ष 1999 के नोबेल पुरस्कार विजेताओं के कार्यों की जानकारी देने हेतु यह कार्यक्रम इस वर्ष दिनांक 25 मार्च 2000 को आयोजित किया गया। वार्ताएं डॉ. अविनाश धर, डॉ. अविनाश सप्रे और डॉ. रवि माडके ने क्रमशः भौतिकी, रसायनिकी एवं फीजियोलॉजी एवं चिकित्सा के लिए दिये गये पुरस्कारों पर दीं। वार्ताओं के अंत में डॉ. सिक्का ने संचालकों को बधाई देते हुए युवा वैज्ञानिकों का ध्यान इस ओर आकृष्ट किया, कि बहुत बार अनुसंधान कार्यों का मूल्यांकन होने में वर्षों लग जाते हैं, जैसा इस बार के एक विजेता को 20 वर्ष बाद यह पुरस्कार दिया गया है। अतः उन्हें अपना धैर्य बनाये रखते हुए उच्च कोटि के शोध कार्य करते रहना चाहिए। इस कार्यक्रम को पिछले वर्षों की तरह डॉ. गोविंद प्रसाद कोठियाल ने संचालित किया।

## 2.0 "वैज्ञानिक" :

**2.1** इस वर्ष भी पूर्ववत "वैज्ञानिक" पत्रिका के तीन अंक प्रकाशित किये गये थे। जनवरी-जून 1999, जुलाई-सितंबर 1999, अक्तूबर-दिसंबर, 1999 व विशेषांक जनवरी-जून, 2000 का अंक अगले वित्तीय वर्ष में प्रकाशित हुआ। सभी अंक सराहे गये तथा विशेषतया राजभाषा स्वर्ण जयंती अंक। संपादन मंडल एवं व्यवस्थापन मंडल इसके लिए बधाई के पात्र हैं।

**2.2** परिषद द्वारा आयोजित **डॉ. होमी भाभा विज्ञान लेख्र प्रतियोगिता - 1999** को अधिक लोकप्रिय बनाने हेतु इस बार कुछ नये कदम उठाये गये। राष्ट्रीय स्तर के संस्थानों के साथ-साथ श्री अतुल बाजपेयी ने लेख्र संबंधी सूचना को हिंदी समाचार पत्रों में छपवाने की व्यवस्था की। इस विषय पर कुछ और प्रयत्न आवश्यक हैं। राजभाषा स्वर्ण जयंती वर्ष के विशेष अवसर पर प्रथम, द्वितीय, तृतीय व प्रोत्साहन पुरस्कार जीतने वाले लेखों के लिए क्रमशः 3000, 2000, 1000, 500 रुपये के पुरस्कार रखे गये। पुरस्कार चयन सर्व श्री डॉ. गो. प्र. कोठियाल, श्री गोरा चक्रबर्ती तथा आर. जी. शर्मा ने किया। प्रतियोगिता परिणाम "वैज्ञानिक" के अक्तूबर-दिसंबर 1999 अंक में प्रकाशित किया गया।

**2.3** "**वैज्ञानिक**" को रियायती डाक दर से भेजने पर परिषद को कठिनाई हुई। इसका मुख्य कारण, संस्था के पास आवश्यक पंजीकरण प्रमाणपत्र का उपलब्ध न होना था। अतः स्वर्ण जयंती विशेषांक की प्रति ग्यारह रुपये की दर से

भेजी गयी। इस विषय पर किये गये प्रयत्नों का फल अभी तक नहीं मिला। श्री महेंद्र कुमार वाजपेयी ने यह कार्य अपने हाथ में लिया है।

## 3.0 भारतीय परमाणु ऊर्जा कार्यक्रम के 50 वर्ष पर पुस्तक :

श्री जी. जी. सुदंरम, एल. वी. कृष्णन तथा डॉ. टी. एस. अय्यंगार द्वारा लिखित अंग्रेजी पुस्तक **'भारतीय परमाणु ऊर्जा कार्यक्रम, 50 वर्ष'** के हिंदी रूपांतरण का कार्य परिषद ने अपने हाथ में लिया। इसके लिए परमाणु ऊर्जा आयोग के अध्यक्ष डॉ. आर चिदंबरम से आवश्यक स्वीकृति प्राप्त हो गयी। यह कार्य परिषद के सदस्य श्री राम निवास आर्य, श्री राम प्रसाद और डॉ. कैलाश चंद्र भल्ला कर रहे हैं। हिंदी रूपांतरण के प्रकाशन का कार्य परमाणु ऊर्जा आयोग करेगा। यह कार्य इस वित्तीय वर्ष में काफी आगे पहुंच गया था।

## 4.0 विविध :

**4.1** "विज्ञान पत्रिका" के प्रकाशन को जारी रखते हुए इस वर्ष दो अंक प्रकाशित हुए। इसके संपादक डॉ. जी. पी. तिवारी नवंबर, 1999 में सेवानिवृत्त हुए। डॉ. तिवारी मुबंई के बाहर परिषद द्वारा आयोजित प्रथम वैज्ञानिक संगोष्ठी (भोपाल में नाभिकीय ऊर्जा विषय पर 20-21 अप्रैल, 1989) के संयोजक थे। डॉ. ज्ञानेंद्र प्रसाद तिवारी को कार्यकारिणी के सदस्यों तथा हिंदी कार्यों से जुड़े सदस्यों ने सी. सी. कैन्टीन (आठवां माला) में भावभीनी विदाई दी।

**4.2 मोनोग्राफ लेखन** एवम् राजभाषा वार्ताओं के कार्यक्रम आशातीत रूप से नहीं किये जा सके। आशा है इस पर कार्य अगले वर्ष बढ़ेगा।

## 4.3 संस्था के पुराने रिकार्ड

परिषद के पुराने रिकार्ड केंद्रीय पुस्तकालय की दो केबिनेट में रखे हुए थे। इसी तरह आय-व्यय संबंधी कागजात भी 1984 वर्ष के उपलब्ध हैं। इनको संभालने में काफी कठिनाइयां हो रही हैं। कार्यकारिणी ने यह निर्णय लिया कि आय व्यय संबंधी कागजात पिछले पांच वर्षों के ही रखे जायें। परिषद की पुरानी फाइलों में से ऐतिहासिक दस्तावेजों को अलग कर शेष निपटा दिये जा सकते हैं। इस निर्णय पर कार्य चल रहा है। सभी पुराने कार्यक्रमों के फोटोग्राफ एकत्र किये जा रहे हैं ताकि फोटो एलबम में अच्छी तरह से सुरक्षित रखे जा सकें।

## 5.0 सदस्यता :

इस वर्ष के अंत तक कुल सदस्यों की संख्या 1240 रही जिसमें से 1103 आजीवन सदस्य, 117 संस्थागत, और 20 साधारण सदस्य हैं।

परिषद इस वर्ष भी अपने सभी कार्यक्रम सुचारू रूप से कर सकी। इन सभी कार्यक्रमों की सफलता का श्रेय परिषद के अध्यक्ष श्री अनिल कुमार आनंद तथा उपाध्यक्ष डॉ. अशोक कुमार सूरी के मार्गदर्शन एवं कार्यकारणी के सभी सदस्यों एवं कार्यक्रमों के संयोजकों तथा उनके सहयोगियों को जाता है। प्रशासनिक एवं वित्तीय सहायता के लिए भा. प. अ. केंद्र के नियंत्रक, आंतरिक वित्तीय सलाहकार, अध्यक्ष, कार्मिक प्रभाग, अध्यक्ष, पुस्तकालय एवं सूचना सेवाएं प्रभाग व उपस्थापना अधिकारी (मुद्रण) तथा हिंदी कक्ष के प्रति भी हम आभारी हैं। परिषद को राजभाषा कार्यान्वयन समिति से काफी सहयोग मिला है, इसके लिए हम श्री बी. भट्टाचार्य, कु. साधना हेमराजानी, श्री प्रवीण कुमार चोपड़ा के विशेष रूप से आभारी हैं।

**रमेश चंद्र पंत**
(मानद सचिव)

# कुछ फूल : कुछ कांटे

विज्ञान पत्रिकाओं से संबंधित जानकारी की मेरी वर्षों की मांग इस बार पूरी हुई। आपने इसे जनवरी- जून 2000 अंक में संपादकीय के तहत *'हिंदी के माध्यम से विज्ञान संचरण एवं लोकप्रियकरण : वर्तमान स्थिति'* से स्पष्ट करने की भरपूर कोशिश है, इतनी एकत्रित जानकारी पाकर अत्यंत खुशी हुई।

प्रस्तुत संपादकीय में हिंदी माध्यम से विज्ञान की वर्तमान स्थिति अंकित है लेकिन सभी पत्रिकाओं का पूर्ण पता और मूल्य अंकित करना छूट गया। चूँकि अधिकांश पत्रिकाएं सरकारी हैं; जहाँ से नमूनार्थ प्रति मिलती नहीं है और कई से तो पत्र का जवाब भी सहज रूप में नहीं मिलता है। ऐसी स्थिति में पत्रिका के संबंध में जानकारी प्राप्त करना असहज कार्य है। पत्रिका के संबंध में पूर्ण जानकारी प्राप्त किये बगैर भला क्यों और कैसे वार्षिक या आजीवन ग्राहक-पाठक बनकर लाभ उठाया जा सकता है। पत्रिका के पूर्ण पते के साथ-साथ उस पत्रिका में किस प्रकार की रचनाएं रहती हैं, पत्रिका क्या-क्या किस विषय-बिंदु को उजागर करती है, रचना प्रकाशन पर मानदेय मिलता है या नहीं ? पत्रिका कब से निकल रही है ? कितने अंक निकल चुके हैं जैसी जानकारी प्रदान करें जिसे पढ़ने से लगे मैंने पत्रिका देख ली है। अर्थात पूर्ण समीक्षा....।

'विज्ञान प्रसार' में लगी सरकारी व गैरसरकारी संस्थाओं के संबंध में भी पत्रिकाओं की तरह ही, दी गयी जानकारी अधूरी लगी। इन संस्थाओं से आम जनता, साहित्यकार, पत्रकार, शिक्षण कार्य में जुड़े विज्ञान तथा अन्य विषयों वाले अध्यापक, विद्यार्थी कैसे जुड़कर खुद तथा आम जनता को लाभांवित कर सकते हैं ? इन संस्थाओं की सदस्यता कैसे ग्रहण की जा सकती है ? कोई संस्था क्या-क्या कार्य कर रही है इसकी भी जानकारी नहीं मिल सकी....।

विज्ञान और कृषि विषय के अतिरिक्त अन्य विषय मनोविज्ञान, इतिहास आदि विषय वाले विज्ञान पत्रकारिता प्रशिक्षण, विज्ञान लेखन - प्रशिक्षण आदि में सहभागी, प्रशिक्षण आदि ले सकते हैं तो कैसे ?

विज्ञान प्रसार में जुड़ने के लिए सरकारी या गैरसरकारी मदद किस प्रकार प्राप्त की जा सकती है। विज्ञान पर आधारित पुस्तक लेखन और प्रकाशित कराने में कौन-कौनसी संस्थाएं मदद प्रदान करती हैं।

इस तरह के और भी बिंदुओं को आधार बनाकर विस्तृत जानकारी प्रदान करने लिए एक विशेषांक निकालें ताकि मेरे जैसे अनेक पाठक पूर्ण जानकारी प्राप्त कर इससे जुड़ सकें। विस्तृत जानकारी के अभाव में जिज्ञासा के बावजूद वे वंचित रह जाते हैं।

मैं आपके सहयोग से बाल विज्ञान पर आधारित पुस्तक निकाल सकूं, पत्रकार तथा विज्ञान साहित्यकार बनने में सफल हो सकूं तो इस अनमोल कार्य से मेरे साथ-साथ अनेक व्यक्ति और बच्चे लाभांवित हो कृतज्ञ होंगे।

**राजेंद्र प्रसाद मधुबनी**
(व्याख्याता मनोविज्ञान, स्वतंत्र लेखक व पत्रकार)
फ्रेंडस कॉलोनी, मधुबनी 847211 (बिहार)

---

वैज्ञानिक का जनवरी-जून 2000 अंक प्राप्त हुआ। इसके सभी लेख अच्छे लगे।

प्रस्तुत अंक के 'वैज्ञानिक परिचय' स्तंभ में नीतू साहु द्वारा रचित महान वैज्ञानिक 'प्रफुल्ल चंद्र राय' का जीवन परिचय बहुत ज्ञानवर्धक लगा। वैसे भी वैज्ञानिकों का जीवन चरित लोगों में नयी उमंग और उत्साह भरता है।

'कंप्यूटर वायरस - एक भयंकर संक्रमण समस्या' लेख में कंप्यूटर वायरस की पहचान और इसके सुरक्षात्मक उपाय की विस्तृत जानकारी बहुत अच्छी लगी। 'काल से दिक्काल : तथ्य और चुनौतियां', 'भारतीय चिकित्सा पद्धति में लाख का प्रयोग' आदि लेख बहुत प्रेरणादायक रहे। आशा है अगला अंक और भी उत्कृष्ट होगा।

**परीनता कुमारी**
द्वारा श्री उत्तम चंद नायक,
सेंट्रल कॉलोनी, ब्लॉक नं.-2, मकान नं - M-28,
मकोली, फूसरो, बोकारो 829 144 (झारखंड)

"वैज्ञानिक" का जुलाई-सितंबर 2000 अंक मिला। कई उपयोगी लेख पढ़ने को मिले, जैसे डॉ. आशा दामोदरन का 'उच्च रक्त दाब - रोकथाम व प्रबंधन', कु. पूजा तिवारी का 'कैंसर का प्रादुर्भाव कैसे होता है'। इसी प्रकार श्री राजकुमार जैन का "जलता आसमान" लेख रोचक और खोजपूर्ण लगा। बधाई।

कृपया इसी तरह की उपयोगी और रोचक सामग्री देते रहें।

**विजय कुमार शर्मा**
2/4 मालवीय नगर, जयपुर 302 017 (राज.)

---

"वैज्ञानिक" पत्रिका के कुछ अंक मैंने देखे जिससे मैं काफी प्रभावित हुआ। खासकर हिंदी की तकनीकी शब्दावली का प्रयोग अनुकरणीय तो है ही, ज्ञानवर्धक भी है!

प्रकाशित लेखों के माध्यम से एक अच्छी प्रमाणिक जानकारी मिलती है। एक अंक में आपने हिंदी में प्रकाशित पत्र-पत्रिकाओं के साथ उक्त संस्था की गतिविधियों को भी स्थान दिया था जो बहुत महत्वपूर्ण है।

"वैज्ञानिक" का यही तेवर बना रहे और आप कुछ और नयापन इसमें दे सकें जिसका लाभ हम जैसे लोगों को मिले यही कामना है।

**रविंद्र गिन्नौरे**
गांधी मंदिर रोड, भाटापारा,
पिन 493118 (छत्तीसगढ़)

---

जुलाई-सितंबर 2000 की "वैज्ञानिक" पत्रिका अवलोकनार्थ प्राप्त हुई। पत्रिका प्रत्येक दृष्टि से आकर्षक, सूचनाप्रद, तथा विज्ञान सम्मत तथ्यों से युक्त है। पत्रिका में सम्मिलित सभी आलेख रुचिकर हैं।

इस अंक में आपने विज्ञान कथा एवं विज्ञान कविता को स्थान देकर स्तुत्य कार्य किया है।

**प्रो. डॉ. राजीव रंजन उपाध्याय,**
निदेशक, उपाध्याय कैंसर शोध संस्थान,
परिसर कोठी, काकेबाबू, देवकाली मार्ग,
फैजाबाद 224 001(उ. प्र.)

---

इतिहास गवाह है कि इंग्लैंड, फ्रांस, रूस, चीन, जापान इत्यादि जिन देशों ने अपनी-अपनी राष्ट्रभाषा में वैज्ञानिक विकास कार्य किये, वे सभी आज विकसित राष्ट्रों की प्रथम पंक्ति में गिने जाते हैं। मुझे यह जानकर हार्दिक प्रसन्नता हो रही है कि "वैज्ञानिक" राष्ट्रभाषा हिंदी के वैज्ञानिक क्षेत्र में विकास हेतु सतत प्रयत्नशील है। अपने विचारों को अपनी ही भाषा में दृढ़तापूर्वक अधिक स्पष्टता के साथ रखा जा सकता है। विकास की प्रारंभिक अवस्था में विज्ञान के शब्दों के चयन में कुछ मुश्किल प्रतीत होती है, परंतु कुछ अभ्यास एवं प्रयासों के बाद मुश्किलें असान भी होती जाती हैं।

"वैज्ञानिक" पत्रिका का (जुलाई-सितंबर – 2000) अंक बहुत ही अच्छा लगा। वैसे तो सभी लेख अत्यंत रोचक हैं। परंतु डॉ. आशा दामोदरन का "उच्च रक्तदाब" से संबंधित लेख मानव स्वास्थ्य संबंधी ज्ञानवर्धन के लिए अत्यंत उत्तम एवं पठनीय है। इस लेख को पढ़ने के बाद यदि एक प्रतिशत लोग भी अपनी जीवन शैली में आवश्यक सुधार करने हेतु प्रेरित होते हैं तो उनके परिवार के लोगों की दुआएं लेखिका महोदया को अवश्य ही मिलेंगी। डॉ. आशाजी से आशा की जा सकती है कि उनके और भी लेख भविष्य में पढ़ने हेतु उपलब्ध होते रहेंगे। श्री राम निवास आर्य की अनुवाद शैली भी स्पष्टतः प्रभावकारी एवं सराहनीय है।

**डॉ. आर. डी. साहू,** वैज्ञानिक -E.I.
ठोस अपशिष्ट प्रबंधन विभाग,
राष्ट्रीय पर्यावरण अभियांत्रिकी अनुसंधान संस्थान,
(नीरी)
नेहरू मार्ग, नागपुर 440 020

---

मैं हिंदी पत्रिका "वैज्ञानिक" (त्रैमासिक) का पाठक हूँ। इस पत्रिका की जितनी प्रशंसा की जाय वह कम है। आशा करता हूँ कि इसमें नयी-नयी खोजों व तकनीकों की जानकारी दी जाती रहेगी।

**पंचम सिंह कौरव**
पुष्पेंद्र भवन, 3-भरगतगढ़, दतिया (म. प्र.)

"वैज्ञानिक" का जुलाई-सितंबर 2000 अंक प्राप्त हुआ। अंक सज्जा और प्रकाशित लेख-चयन एवं परिपक्व संपादकीय विचारों हेतु साधुवाद प्रेषित है। नवीनतम वैज्ञानिक शोध-समाचारों के लिए पत्रिका में वरीयता प्रदान करें तो गुणवत्ता में निश्चय ही वृद्धि होगी और पठनीयता सुरुचिपूर्ण होगी।

**कु. पूजा तिवारी**
द्वारा श्री राम प्रताप तिवारी, तकनीकी अधिकारी,
भारतीय लाख अनुसंधान संस्थान,
नामकुम, रांची 834 010

---

"वैज्ञानिक" का जुलाई - सितंबर 2000 अंक मिला। हमेशा की तरह यह अंक ज्ञानवर्धक लगा। पत्रिका के अंक समय पर निकालने का प्रयास करें। तेजी से भागती दुनिया में भारत के परमाणु विभाग की हिंदी पत्रिका पिछड़ी रहे जाय यह अत्यंत चिंता का विषय होगा। इस प्रकार की श्रेष्ठ पत्रिका को तो 'विज्ञान प्रगति' की तरह 'मासिक' होना चाहिए। अन्य सभी वैज्ञानिक विभागों, संस्थानों से भी इसी तरह की उत्कृष्ट पत्रिका का प्रकाशन होने लगे तो हिंदी में वैज्ञानिक ज्ञान का अभाव नहीं रहेगा। इस अंक में प्रकाशित श्री राजकुमार जैन का 'जलता आसमान' नामक लेख बहुत रोचक और ज्ञानवर्धक था। ऐसे लेख कम ही पढ़ने को मिलते हैं। श्री जैन से प्रार्थना है कि विविध वैज्ञानिक विषयों पर इसी तरह का लेखन करके पाठकों को तृप्त करें।

**ओम प्रकाश वर्मा**
जमशेदपुर

---

"वैज्ञानिक" का जुलाई-सितंबर 2000 अंक मिला। आद्योपांत अध्ययन किया। मन को छूने वाली ग्राह्य, महत्त्वपूर्ण एवं उपयोगी जानकारियां मिलीं। ज्ञानवर्द्धन के साथ-साथ स्वस्थ जीवन शैली के लिए मार्गदर्शन डॉ. आशा दामोदरन के लिख से मिलता है। डॉ. सीताराम सिंह, डॉ. राकेश सिंह सेंगर के लेख अच्छे लगे। अपने प्रयासों से प्रबुद्ध एवं हम जैसे शिक्षक वर्ग का मार्गदर्शन करते रहेंगे।

**राम प्रकाश शर्मा**
टीचर्स कॉलोनी, निकट - एस. एन. इंटर कॉलेज,
शिकारपुर, जिला-बुलंदशहर - 202 395 (उ. प्र.)

## भूल-सुधार

*'वैज्ञानिक' के जुलाई-सितंबर 2000 अंक में प्रकाशित डॉ. आर. डी. साहू के लेख "जैव पदार्थों...वैकल्पित स्रोत" में कुछ त्रुटियां रह गयी हैं पाठक कृपया सुधार लें।*

1. लेख के शीर्षक में Anaerobic fermentation के लिए 'अवायवीय किण्वन' शब्द आया है। अतः लेख के विवरण में जहां कहीं भी 'अवायुजीवी' शब्द आया था उसे सुधारकर 'अवायवीय' किया जाना चाहिए।

2. (पृष्ठ-21) : प्रथम एवं द्वितीय स्तर की रासायनिक क्रियाओं में गलती से ग्लुकोस के लिए क्रमशः n $(C_6H_{12}O_5)$n और n$(C_6H_{12}O_6)$n प्रकाशित किया गया है। वास्तव में इन दोनों ही जगह ग्लूकोस के लिए n$(C_6H_{12}O_6)$ लिखा जाना चाहिए था।

3. (पृष्ठ-34) : तालिका (3) के अंतिम स्तंभ में उत्पादित बायोगैस (घन मीटर प्रति किलोग्राम)% प्रकाशित हुआ है। यहां से % चिन्ह कृपया हटा लें।

**- संपादक**

# भारत का विज्ञान

प्रगति के पथ पर चक्र
राष्ट्र का बढ़ रहा ।
अग्रणी विज्ञान में
भारत को जग अब कह रहा ।
गौरवपूर्ण भविष्य के
स्वप्न लेता है देश अब
हमको 'पिछड़ा' कहने वाला
निरर्थक इतिहास सब ।
यह सफलता भी नहीं कम
झूम रहा खेतों में आज,
संपूर्ण आबादी के
पोषण हेतु पर्याप्त अनाज,
हुए हैं हम आत्मनिर्भर
क्या सुई, क्या विकसित यंत्र,
उत्पादित करते उद्योग
रेडियो और कंप्यूटर
शोध कार्यों में जुटे हुए हैं
उच्चकोटि के वैज्ञानिक,
नव निर्माण को अग्रसर हैं
कुशल, प्रशिक्षित यंत्रविद् ।
ऐसी उपलब्धियां अगर
नित भारत पाता जायेगा
तो वह भी इक दिन विश्व की
महाशक्ति बन जायेगा ।

**- ऊषा द्विवेदी 'राज'**
मकान संख्या - 136-G,
अशोक नगर, बशारतपुर,
जिला - गोरखपुर 273 004 (उ. प्र.)

*'वैज्ञानिक' में प्रकाशित सामग्री का आप बिना अनुमति लिये उपयोग कर सकते हैं । परंतु इस बात का उल्लेख करना अनिवार्य होगा कि अमुक सामग्री 'वैज्ञानिक' से साभार ली गयी है ।*

***- संपादक***

# "वैज्ञानिक" के पूर्व प्रकाशित अंकों की अनुक्रमणिका (1997-1999)

## जुलाई - सितंबर 1997 (वर्ष 29, अंक 3)

### संपादकीय


इलेक्ट्रॉन की खोज के सौ वर्ष तथा ट्रांजिस्टर के पचास 3
- डॉ. गोविंद प्रसाद कोठियाल


### लेख


1. फूलरिन्स : रसायनशास्त्र का नया क्षितिज 5
   - डॉ. अनिल कुमार
2. खाद्य श्रेणी 'हैक्सेन' की उत्पादन प्रौद्योगिकी 10
   - भगत राम नौटियाल, डॉ. मोहनकृष्ण खन्ना, श्रीकांत नानोटी, ज्योत्सना नैथानी, गुरुप्रसाद, धर्मपाल एवं डॉ. बी. एस. रावत
3. संचार / प्रसार माध्यमों के बढ़ते कदम 14
   - डॉ. गोविंद प्रसाद कोठियाल
4. जीव विज्ञान द्वारा मुंबई के निकटवर्ती समुद्र तटीय प्रदूषण का अध्ययन 22
   - डॉ. शं. न. गजभिये एवं रमा शर्मा
5. समुद्री पर्यावरणीय प्रदूषण : एक सर्वेक्षण 26
   - डॉ. शं. न. गजभिये एवं डॉ. शि. शं. गजभिये
6. गुजरात अल्कलीज एंड केमिकल लि. द्वारा लखीगाम के तटीय पानी में अपशिष्ट मोचन का समुद्री पर्यावरण पर प्रभाव 31
   - मोरेश्वर म. सबनीस एवं अनिरुद्ध राम


### टिप्पणियां


1. मनुष्य को प्रभावित करने वाले पशु-विषाणु रोग 35
   - डॉ. ए. बी. पांडेय एवं प्रियव्रत स्वाई
2. खेल स्पर्धाओं में औषधि-विज्ञान का बढ़ता दुरुपयोग 36
   - डॉ. अनिल कुमार शर्मा
3. 'माविस' घाव की नाप-जोख करेगा 38
   - तारिक अस्लम तस्नीम
4. हींग - वातनाशक घरेलू औषधि 40
   - एन. के. बौहरा
5. नेत्रदान - एक राष्ट्रीय आवश्यकता 41
   - वि. आगाशे
6. स्वास्थ्य में तंत्रिका-जाल का प्रयोग 42
   - विनोद कुमार मदान एवं बृजेश तिवारी


### वैज्ञानिक परिचय


1. माइकल फैराडे 45
   - कृषिचयन


### बाल विज्ञान


1. कैसे बनता है कुहरा ? 47
   - डॉ. गणेश कुमार पाठक


### विज्ञान कविता


1. पर्यावरण 48
   - डॉ. अखिलेश्वर तिवारी
2. नाभिकीय ऊर्जा 48
   - अविनाशी बरला


## अक्तूबर - दिसंबर 1997 (वर्ष 29, अंक 4)

### संपादकीय


अंतरिक्ष विज्ञान : कुछ महत्वपूर्ण पहलू 3
- डॉ. गोविंद प्रसाद कोठियाल


### लेख


1. अंतरिक्ष के उपयोग 5
   - एस. एम. श्रीवास्तव
2. भारतीय सुदूर संवेदन कार्यक्रम : एक सफल दशक 8
   - ओम प्रकाश सप्रा, जे. बी. इंगले व अरुण दिनकर धर्म
3. सुदूर संवेदन उपग्रह - आई.आर.एस.-पी 3 : कुछ महत्वपूर्ण पहलू 15
   - एल. एन. गुप्ता
4. मंगल ग्रह की ओर बढ़ते मानव के उत्साही कदम 24
   - काली शंकर
5. चल-उपग्रह संचार 30
   - श्रीमती सुमन आर. बाल्के
6. गोलीय अवरक्त विकिरण मानचित्र 35
   - रमणी शेषमणी, एस. बी. गुप्ता, वाइ. के. जैन
7. सुदूर संवेदन उपग्रहों का अंतर्राष्ट्रीय विकास : उसमें भारत का स्थान 40
   - एल. एन. गुप्ता
8. मंगल ग्रह : अभियान एवं उपलब्धियां 43
   - सुशील कुमार शुक्ला

## विज्ञान कहानी

1. अंतरिक्ष-विहार 45
   - कृषिचयन
2. कहानी विश्व के सबसे बड़े डाक-टिकट की 50
   - डॉ. राज किशोर

## वैज्ञानिक परिचय

1. कल्पना चावला 51
   - डॉ. देवकीनंदन
2. वेलेनतिना तेरेशकोवा 67
   - डॉ. डी. डी. ओझा

## टिप्पणियां

1. अब अंतरिक्ष से प्राप्त होंगे खनिज संसाधन 55
   - डॉ. गणेशकुमार पाठक
2. कैसी है अपनी मंदाकिनी ? 57
   - कृष्ण प्रकाश त्रिपाठी
3. क्या सौर मंडल में दसवां और ग्यारहवां ग्रह भी है ? 60
   - गणेशकुमार पाठक
4. उपग्रह-नीतभार पर पर्यावरणीय परीक्षण एक विवेचन 62
   - सुशील कुमार शुक्ला
5. अंतरिक्ष कार्यक्रम संबंधी कुछ समस्याएं 63
   - श्री बी. श्रीनिवासन एवं श्री वी. नागराजु

## विज्ञान कविता 66

## जनवरी - जून 1998 (वर्ष 30, अंक 1/2)

## संपादकीय

विशुद्ध परमाणु संलयन ऊर्जा : 21 वीं सदी का लक्ष्य 3
- डॉ. गोविंद प्रसाद कोठियाल

## लेख

1. जेनेटिक क्लोनिंग : वरदान या अभिशाप 5
   - डॉ. कृष्ण कुमार मिश्र
2. ज्वार-भाटा से बिजली 9
   - परेश र. वैद्य
3. मंगल अभियान : कुछ उपलब्धियां 16
   - विनिता सिंघल
4. मानव जीवन रक्षक के रूप में सुअर की उपयोगिता 22
   - कु. पूजा तिवारी
5. चतुर संरचनाएं 29
   - राजकुमार जैन
6. अकार्बनिक विनिमायक - एक परिपक्व तकनीक 29
   - नारेंद्र सिंह राठौर
7. मुक्त - इलेक्ट्रॉन लेजर 34
   - अरविंद कुमार
8. पेय जल में विषाणु कार्बनिक पदार्थों का मूल्यांकन 40
   - डॉ. नीता उक्कर एवं राजश्री मुडे
9. कामिनी परमाणु भट्टी 50
   - डॉ. मधु सूदन वी. डिंगणकर
10. जैव पीड़कनाशी 53
    - डॉ. राज नारायण पांडेय एवं
    डॉ. प्रसून कुमार मुखर्जी
11. संपरिवर्तन विलेप 60
    - डॉ. ए. के. शर्मा

## विज्ञान पहेलियां

- अशफ़ाक अहमद 59

## नोबेल पुरस्कार : किसे और किस लिए ?

1. प्रीऑन की खोज : जैव संक्रमण में एक नया सिद्धांत 65
   - कुबेर सी. भैंसा
2. जीवित कोशिकाओं में रासायनिक ईंधन : ए. टी. पी. के उत्पादन एवं विखंडन का रहस्य 70
   - डॉ. के. पी. मिश्र

## कुछ रोचक जानकारियां

- विजया तिवारी 74

## टिप्पणियां

1. लैक्टोज मुक्त दूध उपलब्ध कराने का प्रयास 75
   - डॉ. आर. एस. सेंगर
2. भारतीय डाक विभाग के टिकट पर अंकित पारिजात वृक्ष गोरख इमली है 75
   - डॉ. श्रीकृष्ण तिवारी
3. मरु क्षेत्र के उपयोग पौधे 77
   - एन. के. बौहरा
4. वेल्डन प्रक्रम - कुछ नये विकास 78
   - पी. के. इस्सर
5. खुबानी का तेल - औषधि भी, प्रसाधन भी 79
   - मोहन चंद्र कबड़वाल

### विज्ञान कविताएं

1. भूवैज्ञानिक की जीवन शैली 69
   - डॉ. अखिलेश्वर तिवारी
2. विज्ञान यान 80
   - रामगोपाल परिहार
3. तेज-पुंज-मय, 'जय विज्ञान' 85
   - डॉ. रमाकांत पाठक

### बाल विज्ञान

1. शीले की भतीजी : क्लोरीन 86
   - डॉ. डी. डी. ओझा
2. भारतीय कोयल : एक संक्षिप्त परिचय
   - सुषमा नेगी

## जुलाई - सितंबर 1998 (वर्ष 30, अंक 3)

### संपादकीय

आर्थिक प्रतिबंधों के परिप्रेक्ष्य में स्वदेशी तकनीक 3
- डॉ. गोविंद प्रसाद कोठियाल

### लेख

1. भारतीय चिकित्सा में खनिजों का उपयोग 5
   - डॉ. अवधेश शर्मा
2. होम्योपैथी द्वारा गहन शिरा घनास्रता का उपचार 9
   - समीर कुमार जिंदल
3. मेंढक एक उपयोगी जंतु 13
   - डॉ. राज किशोर
4. पेटेन्ट नियम : एक अहम् आवश्यकता 16
   - कृष्ण प्रकाश त्रिपाठी
5. विज्ञान की शिक्षा एवं बच्चों में वैज्ञानिक दृष्टिकोण 19
   - डॉ. रामप्रवेश भगत

### नोबेल पुरस्कार : किसे और किस लिए ?

1. लेसर-शीतलन प्रणाली : परिचय तथा संकल्पना 23
   - डॉ. बी. एन. जगताप एवं आसावरी मराठे

### विज्ञान कहानी

1. जीवाश्मों में निहित मेरी पहचान : 32
   डायनासौर की आत्मकथा
   - कु. स्मिता चटर्जी

### टिप्पणियां

1. अपशिष्ट जल के परिष्करण द्वारा पर्यावरण संरक्षण 35
   - भगतराम नौटियाल
2. कितने उपयोगी हैं - मैग्नीशियम एवं मैंगनीज 36
   - डॉ. डी. डी. ओझा
3. उत्तराखंड की पादप विविधता : एक परिदृष्य 38
   - डॉ. बी. पी. नौटियाल एवं डॉ. निर्मला पांडे
4. सोयाबीन एक चमत्कारी खाद्य 41
   - एन. के बोहरा
5. प्रदूषण का एक नया स्वरूप : इलेक्ट्रोप्रदूषण 43
   - डॉ. गणेशकुमार पाठक
6. वैम एक उपयोगी जैव उर्वरक 44
   - नीलम वर्मा एवं डॉ. के. के. श्रीवास्तव

### बाल विज्ञान

1. चंद्रमा की गुरुत्वाकर्षण शक्ति 54
2. दूसरे सौरमंडल का जन्म 54
3. मानव नेत्र कार्य कैसे करता है ? 55

### वार्षिक प्रतिवेदन (1997-98)

हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद (भा. प. अ. केंद्र) 58

## अक्तूबर - दिसंबर 1998 (वर्ष 30, अंक 4)

### संपादकीय

मिलेनियम बग 3
- डॉ. गोविंद प्रसाद कोठियाल

### लेख

1. समुद्र में तेल रिसाव और प्रदूषण नियंत्रण के प्रयास 5
   - डॉ. अतुल कुमार सामंत
2. तमिलनाडु तट के अपरदन से पुरातात्विक धरोहर को 10
   खतरा
   - अनिरुद्ध सिंह गौर, सुंदरेश एवं आर. आर. नायर 15
3. कहीं हम सबका नाश न कर दें कीटनाशी !
   - डॉ. दिनेश मणि
4. आकाश-गंगाएं : कुछ जानकारियां 18
   - काली शंकर
5. बीसवीं शताब्दी का अंतिम सूर्य ग्रहण 21
   - सलाहुद्दीन अहमद
6. वर्ष 1998 के विज्ञान और टेक्नोलॉजी की एक झलक 27
   - डॉ. देवकी नंदन

### टिप्पणियां

1. सुपर कंप्यूटर परम-10,000 का विकास 32
   - डॉ. कृष्ण प्रकाश त्रिपाठी

2. जीवन का उदय 34
- ओ. पी. खंडेलवाल
3. घरेलू चिकित्सा में प्रयुक्त कुछ औषधीय पौधे 36
- डॉ. (श्रीमती) शांता मेहरोत्रा
4. थैलीडोमाइड का पुनः पदार्पण 37
- प्रभु नारायण वर्मा
5. गहत - एक उपयोगी दलहन 38
- मोहन चंद्र कबड्वाल

## कुछ विशेष आलेख

1. धान संबंधित कुछ जानकारियां 39
- डॉ. जगदीप सक्सेना
2. अंकीय अपहरण से सावधान ! आ रहे हैं छायाचोर 41
- डी. एन. भटनागर
3. फलों, सब्जियों के संरक्षण की भाप विधि 43
- सोम दत्त

## वैज्ञानिक परिचय

1. अलबर्ट आइंस्टीन 48
2. सर विलियम टॉमसन 49

## बाल विज्ञान

ऑक्सीजन 51

# जनवरी - जून 1999 (वर्ष 31, अंक 1/2)

## संपादकीय

क्वांटम कंप्यूटर - 21 वीं शताब्दी की चुनौती 3
- डॉ. गोविंद प्रसाद कोठियाल

## लेख

1. क्वांटम इलेक्ट्रॉनिकी से जन्मी एक और क्रांति 5
- डॉ. कपूरमल जैन
2. कोशिका-चिकित्सा विज्ञान के नवीन आयाम 18
- कु. पूजा तिवारी
3. गढ़वाल क्षेत्र में पालतू पशुओं पर पाये जाने वाले थिरैप्टैरा परजीवियों (जुओं) की परजीविता 29
- डॉ. आदेश कुमार
4. यूरेनियम : सृजन या संहार का प्रतीक ? 36
- डॉ. कृष्ण कुमार मिश्र
5. महिलाओं और बच्चों पर प्रदूषण का प्रहार 42
- महेंद्र पांडेय तथा डॉ. नंदिता शुक्ला
6. संचार उपग्रहों का अंतर्राष्ट्रीय विकास, उसमें भारत का स्थान एवं उनकी महत्ता 46
– एल. एन. गुप्ता
7. हमारा सौर-मंडल 52
- हरेंद्र सिंह
8. जैव हथियार - संहार का नया रूप 62
- देवाशीष रथ
9. निर्वंश जीन तकनीकी : आनुवंशिकी साम्राज्यवाद का मंडराता नया खतरा 66
- डॉ. राजकिशोर एवं डॉ. बेचन शर्मा
10. मानव : भूमंडल की सर्वोत्कृष्ट कृति 71
- कुमारी मीता चटर्जी

## टिप्पणियां

1. वायुमंडल में घुलता एक धीमा जहर : "सीसा" 79
- डॉ. गणेशकुमार पाठक
2. रेशेदार भोजन और स्वास्थ्य 80
- डॉ. ए. के. चतुर्वेदी
3. तंबाकू सेवन और पर्यावरण 82
- भास्कर द्विवेदी
4. स्वास्थ्य को नुकसान पहुंचा सकते हैं - एल्युमिनियम के बर्तन 84
- डॉ. दिनेश मणि
5. पशुपोषण में विटामिन-ए का महत्व 86
- डॉ. सी. बी. सिंह
6. डाक-टिकटों पर दुर्लभ हिमालयी पशु-पक्षी एवं वनस्पतियां 87
- डॉ. राज किशोर
7. कवक विषाक्तता का मानव जीवन पर प्रभाव 89
- डॉ. एन. के. बौहरा
8. खराब आदतें : वैज्ञानिक दृष्टिकोण 92
- बालकृष्ण काबरा "एतेश"

## वैज्ञानिक परिचय

101
सर जगदीश चंद्र बोस
- सरिता कुमारी

# जुलाई - सितंबर 1999 (वर्ष 31, अंक 3)

## (राजभाषा स्वर्ण जयंती विशेषांक)

उद्घाटन वार्ता : डॉ. आर. चिदंबरम् v
अभिभाषण : डॉ. अनिल काकोड़कर vii

## संपादकीय

"वैज्ञानिक" प्रकाशन की सफलता की कहानी 3
- डॉ. गोविंद प्रसाद कोठियाल

## लेख

1. भारतीय नाभिकीय विद्युत कार्यक्रम 9
- एम. दास
2. नाभिकीय ईंधन का विकास 19
- अनिल कुमार आनंद
3. भारी पानी में हमारी आत्मनिर्भरता 26
- एच. एस. कामथ एवं बी. एस. गुलाटी
4. भारत का आइसोटोप कार्यक्रम : कुछ सफलताएं 33
- डॉ. एस. एम. राव
5. प्रगत भारी पानी रिएक्टर 41
- हर्षद प्रा. व्यास एवं रतन कुमार सिन्हा
6. परमाणु ऊर्जा के विभिन्न नियामक पहलू 52
- जी. आर. श्रीनिवासन, ए. के. असरानी एवं एस. ए. खान
7. रेयर अर्थ्स - उनका उत्पादन और विक्रय 57
- डॉ. टी. के. मुखर्जी एवं वी. के. वर्मा

## राजभाषा स्वर्ण जयंती वर्ष : विशेष आलेख

1. हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद का प्रारंभिक काल 63
- डॉ. माधव सक्सेना 'अरविंद'
2. भा. प. अ. केंद्र की हिंदी गतिविधियों में स्वयंसेवी संस्थाओं की भूमिका 66
- राम निवास आर्य
3. हिंदी दिवस सभी भारतीयों का विजय-पर्व है 69
- डॉ. देवकी नंदन
4. भा. प. अ. केंद्र के प्रशासनिक कार्य में राजभाषा हिंदी 71
- कु. साधना हेमराजानी

राजभाषा का अर्धशतक (कविता) - विपुल सेन 73

## वैज्ञानिक परिचय

एनरिको फर्मी - सुरेखा कुमारी 74

## अक्तूबर - दिसंबर 1999 (वर्ष 31, अंक 4)

## संपादकीय

संसूचन में एक नया आयाम : वायुमंडलीय अवध्वनि 3
- डॉ. गोविंद प्रसाद कोठियाल

## लेख

1. द्रवी-झिल्ली तंत्र : एक वैकल्पिक एवं उन्नत तकनीक 5
- नारेंद्र सिंह राठौर
2. विश्व स्थिति निर्धारण तंत्र 15
- काली शंकर
3. विज्ञान और धर्म के बीच एक मज़बूत सेतु - पोप जॉन पॉल द्वितीय 20
- डॉ. देवकी नंदन
4. डीजल-पेट्रोल वाहनों से पर्यावरण प्रदूषण 24
- एन. एस. त्यागी, आर. पी. कुलश्रेष्ठ एवं कालू राम
5. प्रमात्रा (क्वांटम) सिद्धांत का रसायन शास्त्र में उपयोग 28
- कुमारी वंदना क., एवं प्रो. मनोज कुमार मिश्र
6. विज्ञान और संवेदनशीलता : मध्य-स्तरीय होने का मूल कारण एवं विज्ञान-प्रौद्योगिकी का भविष्य 31
- डॉ. स्वप्न कुमार भट्टाचार्जी

## टिप्पणियां

1. पर्यावरण विघटन और हमारा दायित्व 34
- डॉ. अवधेश शर्मा
2. लेग्युमिनस (फलीदार) पौधों से प्राकृतिक रंगों का उत्पादन 35
- सुभाष चंद्र एवं वी. पी. कपूर
3. हिंदी की उपेक्षित विधा है विज्ञान कथा साहित्य 38
- विजय चितौरी
4. सौंदर्य प्रसाधनों के बढ़ते खतरे 39
- डॉ. डी. डी. ओझा
5. कृषि एवं पशुपालन में केंचुओं का महत्त्व 41
- डॉ. सतपाल सिंह बिष्ट
6. फसलोत्पादन में सूक्ष्म तत्त्वों का महत्त्व 42
- डॉ. दिनेश मणि

## विज्ञान कविताएं

अभिनंदन के फूल 47
उपकारी रोबो 50

## वैज्ञानिक परिचय

सर सी. वी. रामन 50

## हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद

51

## (भा प अ केंद्र) वार्षिक प्रतिवेदन-1998-99

# रचनाकारों से निवेदन

कृपया प्रकाशनार्थ पांडुलिपि तैयार करते समय संपादन की सुविधा के लिए निम्नलिखित निर्देशों का पालन करें :

1] (क) विभक्तियों को शब्दों से अलग लिखा जाये -
*उदाहरण* - 'राम ने', 'मेज पर', 'लड़कों को'
(ख) सर्वनामों की सभी विभक्तियों को मिला कर लिखा जाये-
*उदाहरण* - 'उसने', 'मैंने', 'उनका', 'हमसे'
(ग) जिन सर्वनामों के अंत में 'ही' अथवा 'ई' लगा हो, उनकी विभक्तियों को अलग लिखा जाये -
*उदाहरण* - 'इसी से', 'तुम्हीं को', 'सभी को'

2] पूर्वकालिक क्रियाओं के 'कर' को अलग लिखा जाये -
*उदाहरण* - 'जा कर', 'आ कर', अन्यथा 'कर' मिलाकर लिखें ।

3] संयुक्त क्रियाओं में दोनों अंशों को अलग-अलग लिखा जाये -
*उदाहरण* - 'आ गया', 'चल पड़ा', 'हो सका'

4] जिन भूतकालिक कृदंत क्रियाओं अथवा विशेषणों का अंत 'या' से होता है, उनके स्त्रीलिंग और बहुवचन रूपों में 'य' का ही प्रयोग किया जाये -
*उदाहरण* - 'गया, गयी, गये', 'नया, नयी, नये', 'आया, आयी, आये', 'लाया, लायी, लाये', 'पाया, पायी, पाये', 'खाया, खायी, खाये', 'किया, किये' आदि ।
दृष्टव्य है कि 'भाई', 'लाई', 'पाई' आदि संज्ञाएं हैं । भविष्यकाल में ये रूप निम्न प्रकार होंगे - आयेगा, पायेगा, लायेगा, जायेगा आदि । आवेगा, जावेगा आदि प्रयोग ठीक नहीं हैं ।

5] 'हुआ' जैसी जिन क्रियाओं के अंत में 'आ' है उनके स्त्रीलिंग 'हुई' व बहुवचन 'हुए' के अनुसार होना चाहिए ।

6] 'लिये/लिए' : 'लिये' को 'लिया' का बहुवचन रूप मानें और 'लिए' को विभक्ति चिन्ह ।
'चाहिये/चाहिए' : 'चाहिए' ही लिखा जाये ।

7] 'एसा/ऐसा' : 'ऐसा' लिखा जाये ।
'दिखाई/दिखायी' : 'दिखाई' संज्ञा रूप मानें और 'दिखायी' भूतकालिक क्रिया (स्त्रीलिंग) । *उदाहरण* - 'सांप दिखाई पड़ा', 'मैंने उसे पुस्तक दिखायी' इसी प्रकार 'पढ़ाई' और 'पढ़ायी' में भी अंतर करें ।

8] आदरार्थ आज्ञा रूपों में संभावनार्थक क्रियाओं में 'ए' ही लिखा जाये -
*उदाहरण* - 'आइए', 'खाइए', 'जाइए', 'समझिए', 'कीजिए', 'रखिए' आदि ।

9] अनुस्वार और अनुनासिक ध्वनियां : 'संयुक्त व्यंजन' की अनुनासिक ध्वनि को 'अनुस्वार' के द्वारा दर्शाया जाना चाहिए - वर्ग का प्रत्येक पंचम वर्ण यथा, ङ ('क' वर्ग), ञ ('च' वर्ग), ण ('ट' वर्ग), म ('प' वर्ग), व न ('त' वर्ग) अनुनासिक ध्वनियां हैं ।
अनुस्वार स्थापन का नियम इस प्रकार है : जिस किसी अक्षर के आगे यदि उसी वर्ग की अनुनासिक ध्वनि है तो उसे अनुस्वार (बिंदी) से बदला जा सकता है;
*उदाहरण* - कंगन, अंक, व्यंजन, रंजन, ठंडा, डंडा, पंडित, कंपन, पंप, बंद, परंतु, किंतु, मृगांक, दंडित, संबंध, अंत आदि ।
इस नियम का प्रयोग ध्यानपूर्वक करना चाहिए, अन्यथा अर्थ का अनर्थ भी हो सकता है । जन्म, मान्य, समन्वय, सम्मति आदि शब्द वैसे ही रहेंगे ।

10] एकवचन से बहुवचन - 'या' से 'ये', 'ए' नहीं । जैसे, रुपया - रुपये, हंसिया - हंसिये ('हंसिए' आदरार्थ आज्ञा रूप होगा)

11] संस्कृत के जो शब्द हिंदी में तत्सम रूप में प्रचलित हैं, उनमें 'य' का व्यवहार उचित है । जैसे, अस्थायी, बाजपेजी, उत्तरदायी आदि । इन्हें अस्थाई, बाजपेई, उत्तरदाई लिखना न तो व्याकरण सम्मत है और न व्यावहारिक ।

12] चंद्र-बिंदु का प्रयोग - छपाई की सुविधा के लिए चंद्र-बिंदु की ज़गह अनुस्वार का प्रयोग किया जाये । जैसे, अंधा, आंख, अंगना, चांद, मां, पहुंचना, हां आदि ।

13] संख्याओं को अरैबिक (अंग्रेजी) में लिया जाये - 1, 2, 3, 4, 5, 6, 7, 8, 9, 0

हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद के लिए डॉ. गोविंद प्रसाद कोठियाल द्वारा संपादित तथा श्री गोरा चक्रवर्ती द्वारा प्रिंट शॉप, चेंबूर, मुंबई (फोन : 555 2348 / 556 6284) में मुद्रित व प्रकाशित ।

**वैज्ञानिक (त्रैमासिक)** **R. No. : 18862/70**

दिल्ली, नयी दिल्ली, महाराष्ट्र , हिमाचल प्रदेश, राजस्थान व उ. प्र. के शिक्षा विभागों द्वारा स्कूलों व कॉलेजों के लिए स्वीकृत ।

# 'हिंदी विज्ञान साहित्य परिषद' की वैज्ञानिक मोनोग्राफ प्रकाशन योजना

परिषद ने विज्ञान के विभिन्न विषयों पर लगभग दो सौ पृष्ठों के मोनोग्राफ प्रकाशित करने की एक योजना बनायी है । इसके अंतर्गत लेखन कार्य के लिए मानदेय देने का प्रावधान है परंतु प्रकाशित सभी पुस्तकों पर परिषद के सर्वाधिकार सुरक्षित रहेंगे । इस योजना की शुरुआत नाभिकीय ऊर्जा से संबंधित निम्नलिखित पहलुओं पर मोनोग्राफ तैयार करवाने से की जा रही है । विषय-विशेषज्ञों से पुस्तक की विस्तृत रुपरेखाएं आमंत्रित हैं ।

- नाभिकीय ऊर्जा के शांतिमय उपयोग
- नाभिकीय रिएक्टर
- नाभिकीय ईंधन
- भारी पानी
- आइसोटोप उत्पादन व उपयोग
- रेडियोसक्रिय विकिरण व उनके उपयोग
- नाभिकीय ऊर्जा एवं सुरक्षा
- नाभिकीय संरक्षण
- स्वचालन व रोबोटिकी

रुपरेखाओं का मूल्यांकन परिषद द्वारा गठित एक विशेष समिति करेगी । मूल्यांकन रिपोर्ट प्राप्त होने के बाद लेखक को परिषद के साथ लेखन कार्य संबंधी अनुबंध पर हस्ताक्षर करने होंगे । इस संबंध में अधिक जानकारी के लिए परिषद सचिव से निम्नलिखित पते पर संपर्क करें : **श्री रमेश चंद्र पंत**, अध्यक्ष (RRMD), ध्रुव रिएक्टर, भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र, मुंबई - 400 085